कबीरसागर चतुर्थ खण्डान्तर्गत-

बोधसागर ।

द्वितीय भाग ।

जिसमें

भोपालबोध, जगजीवनबोध,
गरुडबोध, हनुमानबोध
तथा
लक्ष्मणबोध संयुक्त है ।

भारतपथिक कबीरपंथी-
स्वामी श्रीयुगलानन्द (विहारी) द्वारा संशोधित

जिसको
खेमराज श्रीकृष्णदासने
मुम्बई
निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें
मुद्रितकर प्रकाशित किया ।

संवत् १९८०, शक १८४५.

कबीरपंथके प्रधान आचार्य.

श्री १०८ पं० श्री उग्रनाम साहब.

बोधसागर द्वितीयभागकी अनुक्रमणिका ।

इसमें चौथे तरंगसे लेकर आठवें तरंग तक है, जिसमें चौथे तरंगमें भोपालबोध है जो पृष्ठ १से आरंभ होकर पृष्ठ १६परसमाप्त हुआहै।

पांचवा तरंग जगजीवन बोध है जो पृष्ठ १७ से आरंभ होकर ६० पर समाप्त हुआ है ।

छठां तरंग गरुडबोध है जो पृष्ठ ६१ से आरंभ होकर पृष्ठ १०८ पर समाप्त हुआ है ।

सातवां तरंग हनुमान बोध है जो पृष्ठ१०९से आरंभ होकर पृष्ठ१३६पर समाप्त हुआ है ।

आठवां तरंग लक्ष्मणबोध है जो पृष्ठ१३७ से आरंभ होकर पृष्ठ१६०पर समाप्त हुआ है ।

उपरोक्त तरङ्गोंकी अलग अलग अनुक्रमणिका इसप्रकार है ।

अथ भोपालबोधकी अनुक्रमणिका ।

इति ।

अथ जगजीवन बोधकी अनुक्रमणिका।

इति ।

अथ गरुडबोधकी अनुक्रमणिका ।

इति ।

विषय.	पृष्ठ.

अथ हनुमान बोधकी अनुक्रमणिका ।

इति।

भारतपथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित।

श्री-भोपालबोध।

खेमराज श्रीकृष्णदासने

मुम्बई

निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रकाशित किया।

संवत् १९८०, शक १८४५.

सत्य नाम ।

श्री कवीर साहिव ।

यस्योपदेशमाराध्य नरो मोक्षमवाप्नुयात् ।
तं कबीरमहं वन्दे मनोवाकायकर्मभिः ॥

अथ श्रीबोधसागरे

चतुर्थस्तरंगः ।

श्रीग्रन्थ भोपालबोधप्रारंभः ॥

धर्मदासवचन चौपाई ॥

धर्मदास कहे बन्दी छोरा । कैसे जीवन मारत चोरा ॥
केहि विधि जीवन मारत आयी । साहिब सो मोहि भाष सुनायी ॥
कारण कौन मारत यम जीवा । मारन काल कौन है नीवा ॥

सतगुरु बचन ।

सद्गुरु कहैं अंश सुनु वानी । महा कालकी कहौं निशानी ॥
धर्मराय आज्ञा जब करई । तबहीं मीच पृथ्वी पग धरई ॥

धर्मराय वचन ।

भयी सृष्टि बहुत अधिकाई । पृथ्वी भार न जाय सहाई ॥
ताते मीच पृथ्वी तुम जाऊ । जीवन धरि हम परलै आऊ ॥
आनो जीव हमारे पासा । जाहु मीच पृथ्वी करु बासा ॥
पवनरूप घट जाइ समाओ । जीवन जाय बाँधि लै आओ ॥
खांसी जूडी ताप तिजारी । काम क्रोध होउ रोग अपारी ॥

लोभ मोह भ्रम फाँस अपारा । यह नहिं मर्म लखै संसारा ॥
यहि फन्दा जग सबहिं फन्दाओ । विरले हंस सुकृत बन्दाओ ॥
साखी–यहि विधि जगमें आइके,जीव लाउ हम पास ॥
फन्दा डारहु जीव पै, होहु मीच दुख रास ॥

चौपाई ।

यहिविधि कालजब आज्ञादीना । चले यमदूत सब साज सजीना॥
उत पुरुष आज्ञा मोहि दीन्हा । जीवमुक्तावन कहँपठावन लीन्हा
कहे पुरुष सुनु ज्ञानी बाता । काल करे अब जीवन घाता ॥
घात करी सो भक्षण करिहै । बहुरि जीव भौसागर परि है ॥
काल दुष्ट बहु जीव सतावै । सारशब्द विनु मोहि न पावै ॥
याते जग महँ अब तुम जाओ । जीवहिं चिताय लोक कहँ लाओ
आज्ञा मोरि लेहु सहिदाना । जाइ जगत जिव लाओ निदाना
साखी–सुकृत जाहु संसार में, उलटी राह चलाउ ॥
शब्दसार जीवन कहो, काल हंस मुक्ताउ ॥

चौपाई ।

पुरुष आज्ञा हम शिर मानी । करि प्रणाम तब जगत पयानी ॥
देश जालंधर राय भोपाला । गयउ तहां जिन्दाके हाला ॥
जाई पौरिमें ठाढ रहायी । कह्यो पौरिया बहुत चितायी ॥
राजहिं लाउ हमारे पासा । दर्शन करै कर्म नृप नासा ॥
लागे कुंजी कुलुफ किवाँरा । बहुत लोग बैठे शठिहारा ॥
कोइ कहे न्याय जिन्द चाहै । कोइ कहै बटपार यह आहै ॥
कोई कहे मारि यहि खेदो । निर्गुण भेद तिन्है नहिं भेदो ॥
चारि पहर तब रैन वितावा । भयो भिनसार भोर हो आवा ॥
तब हम चरित दिखावन लागे । फूटि कपाट भये दोइ भागे ॥

सबै कँगूरा भुइ खसि परेऊ । ज्ञानी चली राय पहँ गयऊ ॥
साखी-चकित सकल पौरिया, पाछे लगि सब धाय ॥
जहाँ राय भोपाल हैं, तहाँ पोरिया जाय ॥

चौपाई ।

करत गोहार पौरिया जाई । मार मार बहुत हँकराई ॥
राय भोपाल बैठि जहँ राजे । गये पौरिया तहँ सब भाजे ।
कीन्ह सलाम दोई कर जोरी । यह जिन्दा बटपार बडचोरी ॥
कहैं पौरिया पौर उघारो । तुरत बुलाओ राय यहि बारो ॥
जिन्दा वचन नहीं हम माना । बीत रैन भये भोर सुजाना ॥
मंत्र एक जिन्दा तब करिया । फूट कपाट कगूरा गिरिया ॥
तब जिन्दा आयो महराजा । हम आये तेहि पीछे भाजा ॥
ना जानौ कौन यह आही । होय बटपार घसा घर माहीं ॥
साखी-हो राजा महराज मम, कह्यो सत्य हम बात ॥
तत्क्षण जिन्दा मारहू, नातौ सब पर घात ॥

चौपाई ।

सुनो पौरिया कहे अस राजा । सुनिये वेद करौं तव काजा ॥
विप्र बुलाय सुनो मतिमाना । करिये तबै विवेक सुजाना ॥
आज्ञा वेद होय तब मारा । नहिं तौ जिन्दा कहा बिगारा ॥
एतिक वचन राय मुख बोला । साहब आसन तबहीं डोला ॥
तत्क्षण हम अस लीला कीन्हा । रायमहल सोनेक करि दीन्हा ॥
कंचन कपाट रतनकी पाँती । विपरीत बने खम्भ बहु भांती ॥
बने कंगूरा रतन रसाला । चकित राजा भये भोपाला ॥
साखी-भयो विवेक मन रायके, देखत मन पतियाय ॥
कोन पुरुष तुम समरथ, मो कहँ दरश दिखाय ॥

ज्ञानी बचन चौपाई ।

सत्य पुरुषके हम शठिहारा । जीवन काज आये संसारा ॥
पुरुष लोक सत्य परवाना । ताका मरम कोई नहिं जाना ॥
साखी-हेराजा भोपाल सुनु, चीन्हौं यमका जाल ॥
शब्द हमारा परखहु, नातो पैहो काल ॥

चौपाई ।

छोडहु राम नाम हित जाना । सद्गुरु बचन गहो मतिमाना ॥
अलख निरञ्जन छाडो देवा । भ्रम तजि करु सतगुरुकी सेवा ॥
सुमता होय करो दृढ करनी । पहुँचो लोक पुरुषकी शरनी ॥
आवागमन रहित होय जाऊँ । जो प्राणी सत्यगुरु कहँ पाऊँ ॥
पुरुष अवाज जाव डबराई । ताते दर्शन दीन्ह तोहि भाई ॥
छन्द-करहु राजा भक्ति दृढ होय छोडु राज गुमान रे ॥
नारिपुरुष पुत्र पुत्री लेहु हिलिमिलि पानरे ॥
पुरुष नाम लै करहु आरती जीव तृण तुराय के ॥
पुरुष अंक ले पाव बीरा काल गहे नहिं आयके ॥

राजा भोपाल बचन चौपाई ।

तब राजा बन्दे दोनो पाई । करगहि महलन लैं जाई ॥
धन्य भाग मोहि दर्शन दीना । अधमजीवआपनकरिलीना ॥
कुटिल कठोर अधम अघ पापी । दर्शन दीन छुटै त्रयतापी ॥
महा मोह तम पुञ्ज अपारा । वचन तुम्हार कीन रविधारा ॥
उठो सुधर्मा मन चित लायी । साहब चरण पखारहु आयी ॥
छंद-गुरु ब्रह्म रूप प्रकाश अघहर पुंज तमहिं विदारनं ॥
मुक्ति दाता अखिल त्राता कोटिरवि छबि वारणं ॥
सोई रूप धरि जगत प्रकट होय जिनदीनपतितन दुखहरे ॥
भवसिन्धु ताप बुझाय शीतल जीव गहि आपन करे ॥

सोरठा-निज मन मुकुर सुधार, गुरु पदपंकज उर धारिए ॥
मिटै सकल अँधियार, अस्थिर घर तब पाइए ॥

चौपाई।

राजा आज्ञा रानी मानी। साहब चरण पखारे आनी ॥
कञ्चन झारी लै जल धायी। साहब चरण पखारी आयी ॥
राजा रानी चरन धुवाये। अँचरन रानी तबहिं पुछाये ॥
चरण हिये मत्थे पर लायी। चरणामृत सबही मिलि पायी ॥
कीन्ह दण्डवत पलपल रानी। साहब दरस दीन्ह भल आनी ॥

ज्ञानी वचन।

साखी-हमहिं जनि भार चढ़ावहू, हमरे नाम कबीर।
अगम निगम वह पुरुष है, जे गहि लागो तीर।

रानी वचन-चौपाई।

सुनिके रानी वचन पतियानी। तब साहब सों विनती ठानी ॥
और पुरुष जानो नहिं नीका। तुम सतपुरुष आहु यहि जीका ॥
तुमहि पुरुष आहु दृढ़ जानी। और पुरुष नाहीं मन मानी ॥
रानी कहै सुनो महराजा। साहिब आये तुमरे काजा ॥
रानी कहै बेगि गहु चरना। काल अजापी है निज मरना ॥
आये पुरुष हमारे पासा। हमरे मनकी पूजी आसा ॥

ज्ञानी वचन।

सुनहु राय रानी निज वचना। यह तो जाल कालकी रचना ॥
मेटहु काम क्रोध हंकारा। माया मोह तजौ संसारा ॥
ज्ञान हेतु दृढ़ करनी करई। आवागमन का पूरा परई ॥
तजि संसार शब्द कहँ ध्याओ। गुरुगम पुरुष नाम चितलाओ ॥
साखी-नाफिर जन्मे जोइनि ना, स्वर्ग नर्कको जाय ॥
सो हंसा रहित भये, अजर अमर घर पाय ॥

यह तो माया जाल है, कठिन बीर मतवाल ॥
जीव शब्द न मानई, यक दिन खैहे काल ॥
मोह नदी विकराल है, कोई न उतरे पार ॥
सतगुरु केवट साथ ले, हंस होय यम न्यार ॥

चौपाई ।

कोटि जुहार होत नित तोहीं । कैसेकै लौ लावहु मोहीं ॥
कैसे छाडो राज गुमाना । किमिछोडोपाखण्ड अभिमाना ॥
कैसे छाडहु राज बड़ाई । कैसे छाडहु मुख चतुराई ॥
बैठि सभा बोलहु हँसि बाता । कुँवर पचास संग निसि राता ॥
बैठि महल महँ खेलहु सारी । कामिनि के सँग सदा बहारी ॥
छुटे न जाति कुटुम्ब की आशा । छुटे न कञ्चन भोग विलासा ॥
साखी—यह सुख कैसे छोडिहो, हमतो कथे निरास ॥
सैन चैन जब छोडहू, चलहु पुरुषके पास ॥

राजा भोपाल वचन ॥

कहै राय सुनिये गुरुदेवा । मोकहँ राखु चरन की सेवा ॥
मस्तक मोर दीजिये हाथा । हम अघ करमी होयँ सनाथा ॥
छोडो रानी और निवासा । छोडो संग ओ पुत्र पचासा ॥
छोडो सहस बीस मैं हाथी । अब मैं चलौं तुम्हारे साथी ॥
अब हम दौलत छाडैं तुरंगा । छोडों सकल कामिनी संगा ॥
देह गर्व औ राज गुमाना । छोडेउँ सकल भक्ति मनमाना ॥
जब तुम अमृत वचन पुकारा । तेहि क्षण छूटा सकल विकारा ॥
छन्द—दया निधान करुणा विलोकहु महादारुण दुख दहे ॥
मैं अधम जीव अघोर अकरमी पतित पावन पद गहे ॥
तुम ज्ञान घन विज्ञान आगर धर्म कंटक मर्दनं ॥
तुव नाम अमोल समरथ करहु दाया निर्धनं ॥

सोरठा-अविरल भक्ति तुम्हार, पूरे भागते पाइये ॥
विनवों बारम्बार, पुरुष दरश करवावहू ॥

ज्ञानी वचन- चौपाई ।

नाम पदारथ देउँ मैं तोहीं । तैं राजा चीन्हा दृढ मोहीं ॥
पुरुष नाम एक यज्ञ कराओं । जेहि नाम ते हंस बचाओं ॥
जरी केर एक चँदोवा तानो । कञ्चन केर सिंहासन आनो ॥
दिवालगिरी लागे जरकेरा । मोतिन झालर लागु घनेरा ॥
मोतिन लै भर थार धराऊँ । तापर आरति जोति लसाऊँ ॥
कंचन कलसा पाँचो बाती । झारीजल हीर लै पाती ॥
पूंगी फल औ स्वेत मिठाई । चन्दन पान धरो तहँ लाई ॥
कदलीफल उत्तम तहँ जानो । मेवा अष्ट युक्त प्रमानो ॥
कदलीपत्र कपूर सुगन्धा । आमपत्र लै चहु दिशि बन्धा ॥
सात हाथ वस्तर ले स्वेता । पुष्प गुलाब कहौ मरु केता ॥
नौ रतन लै थार धरायी । मनि मानिकके मध्य रहायी ॥
यह सब विधि जब दीनबतायी । राजा सबही लीन सजायी ॥
चौका बैठे सतगुरु जबहीं । रानी राय चरण गहे तबहीं ॥
सवा लाख दीपक तहँ बारी । बहु आनन्द शब्द विस्तारी ॥
सब मिलिहाथनारियललीन्हा । आगे धरा दण्डवत कीन्हा ॥
राजा तृण धरै मुख माँहीं । भये अधीन बाँधि कर आहीं ॥

राजा भोपाल वचन ।

तुम दीननके आहु दयाला । कृपा कीन्ह मोहि प्रतिपाला ॥
अब जनि मोसन करहु दुराई । अपने कर लीजै मुकताई ॥
यहि संसार नाहिं मम काजा । दारुण महा काल है राजा ॥
अब तुम आपन लोक दिखाओ । महा पुरुष के दर्श कराओ ॥

सतगुरु वचन।

नौ नारी मिलि विन्ती करई। कुँवर पचास ठाढ़ तहँ रहई ॥
बेटी एक सुरजकी जोती। ताहि लिलार पुहे जनु मोती ॥
साहब चरण धरा तिन आयी। अब हम चरण छोडिनहिंजायी॥
कीन्ह आरती नरियर मोरा। सकल जीवके तिनुका तोरा ॥
सुकृत अंश बुलाये ज्ञानी। पुरुष दरश करि राजा आनी ॥
ले अमरावहु लोक द्वारा। पल महँ लाय ठाढ बैठारा ॥
दिना चार लगि राख्यो काया। वेगिजाय पुरुष पहँ आया ॥
लिखिलिखिपानसबनकहँदीना। सकलो जीव बन्दना कीना ॥
जेते जीव परवाना पावा। तेते हंसा लोक सिधावा ॥
काया छोडि हंस चले आगे। सत्यसुकृत के चरनन लागे ॥
लागी डोर पुरुषके पासा। तबै दूत यक कियो तमाशा ॥
सुकृत संग हंस सब जेते। आये दूत कला धरि तेते ॥
छाप तिलक तब विरचि बनायी। मारगमाँहि ठाढ भय आयी ॥
आओ हंस पुरुषके पासा। नातो होवै ठाट विनाशा ॥
बोलै दूत हंस कहँ जायी। हम गुरुज्ञानी तोंहि सहायी ॥
हमरे संग चलो हो राजा। हमरे शरण काल उठि भाजा ॥
हंसा कहै दूत सुनु बाता। जिनके हंस तहां हम राता ॥
हंस रूप तुम धरि बटपारा। हम नहिं फन्दा परै तुम्हारा ॥
सुकृत कहै हंस चलि आऊ। हमरे संग काल नहिं पाऊ ॥
बाएँ अंग कालका धारा। दहिने पाँजी अहै हमारा ॥
ताहि द्वार होय सुरति लगाओ। बेगि दरश पुरुषके पाओ ॥
सुकृतसागर पहुँचे जायी। अहो हंस तुम लेहु नहायी ॥
सकल हंस मिलि पैठि नहावा। निरखै द्वीप द्वीप का भावा ॥

देखहिं लोक लोककी रचना । तब टेके सुकृतके चरना ॥
बैठे लोकमहँ हंस निहारा । जहँवाँ पुरुष आप विस्तारा ॥
सकल हंस तहँ बैठे पांती । सोरह रवि हंसनकी कांती ॥
पुहुप सेज सब हंस बिराजा । तहँवा बुझाय नहिं रंकऔराजा ॥
कंचन भूमि देख अति शोभा । बरनौ कहा हंस तहँ लोभा ॥
राजा कीन्ह दण्डवत जबहीं । रानी पुत्र कीन्ह पुनि तबहीं ॥
अब नहिं भवमहँ जाउ लिवायी । अति आनन्द बहुत सुखपायी ॥

सुकृत वचन।

सुकृत उत्तर कहे समझायी । चलू राय गहिर जनि लायी ॥
जो तुम गहर लगावहु राजा । विनशे ठाट तब होय अकाजा ॥
तब पछतैहो राय भुपाला । ततक्षण वेगि चलो यहि हाला ॥

राजा भोपाल वचन ।

विनशे ठाट होय जरि छारा । अब नहिं छोडब चरण तुम्हारा ॥
ऐसा लोक छोडि नहिं जाअब । बार बार तुहि माथ नवायब ॥

छन्द–राजा करै बहु बीन्ती तुम दीन बन्धु दयाल हो ॥
हंसन नायक परम लायक काटिया फन्दा काल हो ॥
चरण शरण आधीन समरथ शरण राखो आपनो ॥
दास जानि बन्ध छोरो काल तेंहि नहिं पावनो ॥

सोरठा–अब हम शरण तुम्हार, दास जानि दाया करो ॥
आयो पुरुष दरबार, आपन कै प्रतिपालिये ॥

ज्ञानी वचन चौपाई ।

एती विन्ती राजा ठानी । ज्ञानी देश जलन्धर जानी ॥
भवसागर सो ज्ञानी आये । पुरुष दरश कीन्हा तब जाये ॥
दिना चार ऐसेहि चलि गयऊ । राजा खबरि कोई नहिं दयऊ ॥

तबैं पौरिया रावपहँ जायी । महल देखि कोइ नाहिं रहायी ॥
कहँवा राजा कहँवा रानी । कहँवाँ पुत्र कुवँर रजधानी ॥
कहँवाँ बेटी है चन्दावति । ताकर रूप बरनो कौनी गति ॥
कहँवाँ रानी कामसुरंगा । परिमल अंग बसत जेहि संगा ॥
रोवत गयउ पौरिया द्वारा । जाय सबन सों कीन्ह पुकारा ॥
जाति कुटुम्ब सब देखन आये । जिन राजा ते बहु सुख पाये ॥
साखी-देखत अमिहत राजाकी, भयी अचम्भो बात ॥
रोवत कुटुम्ब दीवान मिलि, किन यह कीननिपात ॥
नगर लोग व्याकुल भये, घरघर रोवन लाग ॥
की यहि राजा मारिया, सबहिन केर अभाग ॥

चौपाई ।

कहै पौरिया सुनो दिवाना । तुम हम बूझो हम सब जाना ॥
जिन्दा एक नगरमें आया । तासों राजा कोन फुँकाया ॥
कह्यो राय मैं बहुत चितायी । तुरतहिं जिन्दा कहँ मरवायी ॥
राजा बात नहीं पतियावा । वचसुनि राजा मोहि रिसावा ॥
राजा कहै मुक्तिकरदाता । अस नहिं जाने करै निपाता ॥
मोर कहा माना नहिं भाई । जस कीन्हा तस फल तिन पाई ॥
साखी-वचन पौरिया सुनतही, विकल भये सब कोय ॥
आज गरासे राय कहँ, काल ग्रासै लोय ॥

चौपाई ।

नगर लोग तब कीन्ह विचारा । सब मिलि भागो करो सम्हारा ॥
भूलि अन्ध शब्द नहिं चीन्हा । मारन काल तिहूँ पुर दीन्हा ॥
साखी-सुकृत अंश न पाइया, अन्धा गये भुलाय ॥
धन्य रायभोपालहै, गहे शब्द चित लाय ॥

छन्द-गये राजा लोक कहँ तजिया सब मान गुमानहो॥
इमि हंसा धर्मनि जो मिलै तुम देहु ताको पानहो॥
कहै कबीर जो शब्द मानै सकल तजि नामे गहै॥
अपवर्ग निश्चय ताहि कहँ नहि पला पकडत काल है॥
सोरठा-जो हंसा इमि होय, शब्द सार तासों कहो॥
काग चाल तिन खोय, हंस चाल गहि लोक लो॥

इति श्रीग्रंथभोपालबोध समाप्त।

इति श्रीबोधसागरे कबीरधर्मदाससम्वादे भोपालबोधवर्णनो नाम चतुर्थस्तरंगः।

इति
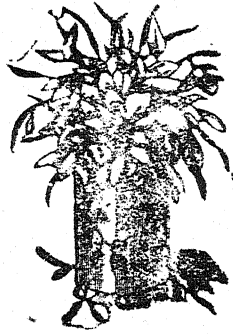
श्रीबोधसागरान्तर्गत

ग्रन्थ भोपालबोध

समाप्त

भारतपथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित।

श्री-जगजीवनबोध।

खेमराज श्रीकृष्णदासने

मुम्बई

निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रकाशित किया।

संवत् १९८०, शक १८४५.

श्री कवीर साहिव ।

सत्यं शुद्धं गुणातीतं कंजपर्णसमुद्भवम् ।
सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥

अथ श्रीबोधसागरे

पंचमस्तरंगः ।

ग्रन्थ जगजीवन बोध ।

(गर्भ चितावनी)

धर्मदास वचन -चौपाई

धर्मदास कह सुनहू स्वामी । कहो गरभकी अन्तर्यामी ॥
कैसे जीव गरभ में आवे । कैसे जीव जठर दुख पावे ॥
कैसे जीव परवशै भयऊ । कैसे इन्द्री देह बनयऊ ॥
कैसे जीव अपन पद दरसे । कैसे जीव समरथ पद परसे ॥
कैसे जीव कौल बंधावे । कैसे साहब दर्शन पावे ॥
सो सब भेद कहो गुरु ज्ञानी । घट भीतरका भेद बखानी ॥

सतगुरु-वचन ।

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा । तुम घट भली बुद्धि परकासा ॥
प्रथमैं सत्य नाम गुण गाऊँ । घट भीतर का भेद बताऊँ ॥
सबही जीव गर्भ में जावैं । कौल बान्ध के बाहर धावैं ॥
चूके कौल गरभ का भाई । बारम्बार गरभ में जाई ॥
ना नाथ सिद्धि चौरासि भारी । उनहूँ देह गरभमें धारी ॥

नौ अवतार बिष्णु जो लीन्हा। उनहूँ गरभ वसेरा कीन्हा॥
तेतिस कोटि देव कहाये। गरभ बास महँ देह बनाये॥
जोगी जंगम औ तप धारी। गर्भबास में देह सवाँरी॥
गर्भ वास तब छूटे भाई। जब समरथ गुरु बाहँ गहाई॥

गर्भोत्पत्ति वर्णन।

नारि पुरुष बांधे संयोगा। कामबाण लगि देह सुख भोगा॥
सत धातुका अंग बनाया। जिह्वा दांत मुख कान उपाया॥
हाथ पावँ रु शीस निमाया। सुन्दर रूप बनी बहु काया॥
नख शिख काढ़ू नर बहु कीन्हा। दशही द्वार युक्ति करि लीन्हा॥
दश द्वार नौ नाडि बनायी। ऐसे सबतर बन्ध लगायी॥
दीन्हा ठेक बहत्तर भारी। नाडी बन्धन बहुत अपारी॥
नाद बिन्दुसो काय निरमायी। तामें प्रकृती आन समायी॥
हद कारिगर हुन्नर कीन्हा। जैसे दूधमें जामन दीन्हा॥
तीनसों साठ चार बन्ध लायी। सोलह खांई तहाँ बनायी॥
सोलह खांई चौदह दर्वाजा। अहूँठ हाथ गढ खूब विराजा॥
छाजे महल अधिकही छाजा। तामें जीव जो आनि विराजा॥
अजब महल बहु खूब बनाया। छठे महल हंस चितवन लाया॥
छठे मास में सुरती आयी। दुख सुखकी तब पारख पायी॥
छै मासको भयो जब प्रानी। दुख सुखकीमति सबै पहिचानी॥
ओंधे मुख झूले लटकंता। मैल बहुत तहँ कीच रहंता॥
जठर अग्नि तहँ बहुत सतावै। सँकट गर्भ तहँ अन्त नआवै॥
बहुत सांकरी पिंजार पोई। तडफडै बहुत निकसेनहिं जोई॥
मुखसोंबोल निकसिनहिं आवै। करुना करि मन में पछितावै॥
अरुझे श्वास रोवै मन माहीं। कौन करमगति लागी आहीं॥
करुणा करि मन में पछितावे। ज्यों बकरी कंठ करद बठावे॥

तादुखकी गति कासु कहीजे । करम उनमान तहँ दुःख सहीजे ॥
यहि आलोच करै मन माहीं । संगी मित्र कोइ दीखत नाहीं ॥
पिछला जनम जब सूझा भाई । तब जिव दिलमा चिंता आई ॥
स्त्री मित्र कुटुम्ब परिवारा । सुत नाती औ सैन पियारा ॥
संगी सुजन बन्धु औ भाई । गरभ कि चीन्ह परी नहिं ताई ॥
महा दुःख सो गरभ में पावे । बहुत वैराग हियामें आवे ॥
सूझी सकल बाहरकी बाती । जो जिव पिछली होती जाती ॥
जब जिवगरभमें ज्ञान विचारा । अब मैं सुमिरूं सिरजन हारा ॥
सोच मोह जिव कछू न कीजे । अब सद्गुरु का शरणा लीजे ॥
जिव अपने दिल माहि विचारे । तब समरथ को कौन पुकारे ॥
सुनु धर्मदास यक कथा सुनाऊँ । यक राजा को जस बनै बनाऊँ ॥
राय जगजीवन ताहिकरनामा । जब वह पहुँच्यो एही ठामा ॥
करन विन्ती लागु अधीरू । सतगुरु कहँ कीन्ही टेरू ॥

जगजीवन वचन ।

साहिब संकट दूर निवारो । मैं निज खानाजाद तुम्हारो ॥
दिल में करणा करै अति भारी । अब मोहि साहब लेहु उबारी ॥
करै अस्तुति बहुतै सुधिलावै । तुमबिनु खाविन्द कौन छुडावै ॥
अब दुख दूर निवारो स्वामी । कौल करूँ प्रभु अन्तरयामी ॥
बाहर निकारो आदि सनेही । बहु दुख पावै मेरी देही ॥
मैं जन प्रभुको दास कहाऊँ । आन देव के निकट न जाऊँ ॥
सतगुरुका होय रहों चेरा । दम दम नाम उचारूँ तेरा ॥
नित उठि गुरु चरणामृत लेऊँ । तन मन धनै निछावर देऊँ ॥
जो मै तन सों करूँ कमाई । अर्धमाल मैं गुरुहि चढ़ाई ॥
कुबुद्धिसीख काहू नहिं मांनू । हराम माल जहर करि जांनू ॥
कुलकी त्यागूँ मान बडाई । निर्मल ज्ञान एक संत सगाई ॥

रात दिवस ऐसे लव लाऊँ । करत फुरत भक्ति गुरु कराऊँ ॥
दुख सुख परे सो तनसे सहूँ । भक्ति दृढै गुरु चरणै रहूँ ॥
परत्रिया ताकूं नहिं कोई । जननी बहेन करि देखूं सोई ॥
दुष्ट बैन कबहूँ नहिं खोलूँ । शीतल बैन सदा मुख बोलूँ ॥
स्वास उस्वासमों रटना लाऊँ । आन उपाय एको नहिं चाऊँ ॥
तन मन धन निछावर देऊँ । सतगुरु का चरणामृत लेऊँ ॥
सतगुरु कहैं सोई अब करि हौं । आज्ञा लोप पाओं नहिं धरिहौं ॥
और सकल बैरी कर जानूं । सद्गुरु कहँ मित्र कर मानूं ॥
ज्ञान बतावे सोई गुरुदाता । तन मन धन अरपूं उन ताता ॥
तन मन धन मैं उनको देऊँ । नित उठि गुरुचरणामृत लेऊँ ॥
यहि गर्भबास मेंकौल बँधाऊँ । बाहर निकारो धुर निर्बाऊँ ॥
जो मैं छूटूँ गरभ सबेही । तन मन अरपूँ औ गुरु देही ॥
एक नाम सांचा कर मानूं । और सबै मिथ्या कर जानूं ॥
कहा अंस्तुति करों गुसाई । बहु दुख पावत हूँ या ठाई ॥
यहां कोई मित्र नाइं भाई । मातु पिता नाहिं लोग लुगाई ॥
देवी देवका कछू न चालै । गुरु विन कौन करै प्रतिपालै ॥
अब तो खबर परी यहि ठाहीं । और कोईका चालै नाहीं ॥
पिछली बात मैं हृदय जानी । कोई काहू का नहीं रे प्राणी ॥
अपने साथ चलेगा सोई । जो कछु सुकृत करे सो होई ॥
मद माया में जीव भरमाया । सो तो कोई काम न आया ॥
बहुत विचार किया मैं सोई । अन्तकाल अपनो नहिं कोई ॥
ऐसी करुणा करै विचारा । दया करो दुख भंजन हारा ॥

साहिबवचन ।

तब साहिब यों कहै पुकारा । कहि समझाया तोहिं बारम्बारा ॥
अनेक बार गरभ में आया । तैं रता कर्म भरम नहिं पाया ॥

कई बेर तैं कौल बँधावा। कई बार तैं गर्भ में आवा ॥
गर्भ में ज्ञान उपजा है तोही। संकटमें सुमिरे सब कोही ॥
बाहर निकसि नहिं उपजै ज्ञाना। अंधकार अहंकार समाना ॥
बार अनेक भुलाना भाई। नहिं सतगुरु की दीक्षा पाई ॥
गरभ त्रास तब छूटै भाई। जब सतगुरु कहँ बाँह समाई ॥

जगजीवन वचन।

बोलत बचन कहो गुरु देवा। जीवकी अवधि बताओ भेवा ॥
दीन दयाल दया गुरु कीजै। बूडत जीव आपन करि लीजे ॥
दयावंत गुरु दीन दयाला। मुक्तिरूप जीवन प्रतिपाला ॥
मोकों अभय दान गुरु दीजे। अन्दर ज्ञान उजालो कीजे ॥

सतगुरुवचन।

गरभ बासमें कौल बन्धावा। सो कैसे तैं न बाहर निर्बांवा ॥
बहु संकट तोहि उपजे ज्ञाना। बाहर निकसत सब विसराना ॥
जोई जीव कौल निर्वाहै। सोई नहिं गरभ बास महँ आहै ॥

जगजीवन वचन।

अब नाहीं भूलूं गुरु देवा। तन मन लाय करूं गुरु सेवा ॥
मोकूँ बाहिर काढो स्वामी। कौल न चूकूँ अन्तर्यामी ॥

सतगुरु वचन।

कौल बोल सबचौकस कीना। तबहीं गर्भ सों बाहर लीना ॥
नौवें मास जो बाहर आया। लोक कुटुम्ब सबही सुख पाया ॥
सबही हरष करै मन माई। पुत्र हेतु सब करै बधाई ॥
बाजा बाजैं करै उछावा। गीत नाद अधिके चित आवा ॥
सबै सजन मिलि गूड़ बँटावा। रैन समय तिय मंगल गावा ॥
नगरलोक सब करैं बधाई। घर घर साजे देइ लुगाई ॥
घर राजाके जनम सो पइया। कौल कीया सो सब विसरैया ॥
पीसुन मिले सबहिं धुतारा। सबहीं ज्ञान भुलावन हारा ॥

ताका नाम सुनो रे भाई । महा जालके फन्द फँदाई ॥
झूठे झूठ मिले संसारा । नरक कुण्ड में नाखन हारा ॥

पिसुन कर्म वर्णन ।

प्रथम माता ।

माता मनमें करै बखाना । यह भल उग्यो आजुको भाना ॥
बालक जन्मा मोरे कोखा । जन्म भरे की भागी धोखा ॥

नाइन ।

नाइन एक बधाई लायी । तिन तो एकै बात जनायी ॥
मेरा कहा करो तुम कामा । नाक छेदि कहो नाथू नामा ॥
नाल औवल पीसो गाढो । दिहली को तब बालक काढो ॥
यह तो बात मैं गुप्त सुनायी । मुवा जिवाका तो मुहि दाई ॥

पिता ।

पिताके मनमें ऐसी आवैं । उमगे हरष हिय नाहिं समावैं ॥
बाटे पान मिठाइ बहूता । धन्य भाग्य मोर जनम्यो पूता ॥

काका ।

काका कहै मैं उतरूं पारा । बालक खेलै घरके द्वारा ॥
कर्म जोर मोरे बड कीन्हा । क्षेत्रपाल मोहिं बालक दीन्हा ॥

दादा ।

दादा सुनिकै दौरे आये । पोता देख बहुत सुख पाये ॥
दासी हाथे कुवँर मँगाया । हेतु प्रीति से कण्ठ लगाया ॥

दादी ।

दादीके मन हर्ष अपारा । लेत बलाई बारम्बारा ॥
मैं करी बहुत सतियनकी सेवा । भये प्रसन्न मोर कुलदेवा ॥

नानी ।

नानी आवत वेगि उठाया । मुख चुम्बा है कण्ठ लगाया ॥
लून ले शिर ऊपर वारा । द्रव्य माल पुनि बहुत उतारा ॥

नाना ।

अब नाना मुख देखन आया । दौहित्रा देखि अधिक सुख पाया ॥
उमगे हरष हिये न अमायी । कंचन चूरा दिया बधायी ॥

भुवा ।

बहुत करै हरष भुआ बाई । दिन दिन अधिकी करै बधाई ॥
मुख चुम्बा दै कण्ठ लगावे । हिये हर्ष उमँग नहिं मावे ॥

मौसी ।

मौसी मन बहु हर्ष उठावै । धन्य बहिन को कोख तरावै ॥
मुख चूमे अरु कण्ठ लगावे । अतिशय उमंग हिये नहिं मावैं ॥

अडोसी पडोसी ।

बुढिया एक जो बोलै आयी । तिन यक बात कही समझायी ॥
बालक तैल लौन सों लीजै । लौना नाम कहे धरि दीजै ॥

दूसई पडोसिन ।

दूजी कहै सुनौ रे बाई । बालक डारो छीतर माई ॥
सांचो टोना यही कहावों । इनको छीतर कहि बतलावो ॥

तीसरी पडोसिन ।

तिया तीसरी बोलै सयानी । मैं जान्यों सो काहु न जानी ॥
कोदरा बरोबर तौल के लीजै । याकर नाम कोदरसिंह कीजै ॥

चौथी पडोसिन ।

चमरिन गोद यहीको डारो । मोल लेइ पुनि ताहि उजारो ॥
चमरूसिंह नाम यहि केरा । बालक याते जिवै घनेरा ॥

पांचवी पडोसिन ।

याको घूर गुनौरे डारो । दूत पराछित या विधि मारो ॥
घूरन सिँह अरु गेनौ नामा । दीजै ताहि सुधरे सब कामा ॥

छठीं पडोसिन ।

यह सब बात बताओ माई । चूल्हे डारो चुल्हन कहाई ॥
जेती नारि आयीं तेहि बारा । सबहिन आपन मता उचारा ॥
कोइ काहूँ कोइ काहु बतावैं । स्यानप आपन सबहि जतावैं ॥

ओझा और स्याने ।

बुढवै एक जो सीस धुनावैं । वाके शिर पर भैरों आवैं ॥
सो कह हमको बैल बधाओ । भैरौंसिंघ कही बतलाओ ॥
देवी पूजक एक तब आया । देवीसिंह तब नाम बताया ॥
गाजी मुर्गी कोई चढावै । ग़ाज़ीदीन तब नाम बतावै ॥
यहि विधि अनेकन आये । आपन आपन उक्ति सुनाये ॥

पुरोहित ।

घरको पुरोहित ऐसी कही । मनको मनोरथ पूरण सही ॥
यह तो बडा सपूत कहावै । इनके तुलै कोई नहिं आवैं ॥
पुरोहित कह यजमान है मेरा । कुल देवी भैरोंका चेरा ॥

चारण और भाट ।

चारण भाट जपै महमाई । भोजक भाट तहां चलि आई ॥
सबही मिलि दीनी आशीशा । महामाइ सुत कीन्ह बख्शीशा ॥

मुसलमानी फकीर ।

दर्वेश एक कहै समुझाई । नाम फकीरा कहो रे भाई ॥
बाँधि गांठ गले में दीजे । सब पीरों का चरणा लीजे ॥

योगी ।

जोगी एक तहां चलि आया । मेरी भभूत का परचा पाया ॥
कहा हमारा सुनिकै लीजे । याका नाम सदाशिव दीजे ॥

दिगम्बर ।

यत्र मंत्र जतीकरि लाये । करि तावीज गले पहिराये ॥
वज्र वट्ठ सूअरदांत मंगायी । एक सुपारी माहि मढायी ॥

भोजपत्रमें यंत्र मढाया। सात भांतिका रेशम लाया ॥
गूगल बारि धूप लै कीन्हा। सो पहिराय गलेमें दीन्हा ॥

पण्डित लोग।

ब्राह्मण सबही नगरके आये। पत्रा पोथी साथहिं लाये ॥
पीपल केरे पान मँगाया। लगन साधिके नाम सुनाया ॥
जगजीवननाम जनमकासही। याका मरण होय ना कबही ॥
द्रव्य माल दक्षिणा दीना। जन्मपत्रिका लिखाय जो लीना ॥
बहु विधि सो संस्कार कराया। मोह फांसमें पकरि दबाया ॥
गर्भ कौल तो सब विसराना। अमर रहनका जतन बहु ठाना ॥
एक सो बात गुप्त ना होई। स्याना लोग कहैं सब कोई ॥
फन्दा अनेकन में फन्दाई। कौल किया सब गया भुलाई ॥
झूठे झूठ मिले सब कोई। इनते काज एको नहिं होई ॥
पिछली कौल सबै विसरानी। महा जाल में बँधे प्राणी ॥
यह सब झूठै पाखण्ड साजू। इनसूं सरै न एको काजू ॥
साखी-कहैं कबीर सब चेतहू, आगे काल कराल ॥
आल जँजाल तम छाडिके, पिछले लोक सँभाल ॥

चौपाई।

जौन कौल गर्भ में कीया। सो मूरख विसारि-सब दीया ॥
फिर भी कठिन होगया भाई। तब तुम करिहौ कौन उपाई ॥
इतने सब मिलि करहिं बधाई। तामें तेरा कौन सहाई ॥
तुम अबकी चेतौ जो नाहीं। मानुष जनम भाग बड पाही ॥
साखी-ये तेरे मित्र नहीं, सब वैरी करि जान ॥
उबरा चाहो कालते, गुरुहि मित्र कर मान ॥

चौपाई।

एक जीव बैरी बहुताई। यूथ युत्थ बाटन सब लाई ॥
कोई जीवको का तकसीरा। सबको जडिया मोह जँजीरा ॥

ज्ञान ध्यान जिव कैसे पावैं । इतने पिशुन ताहि भरमावैं ।
देखो दिलै करि ज्ञान विचारा । किहिविधि उतरो भवजल पारा
रे कुबुद्धि दुख में मत झूलै । पिछला कौल बोल मति भूलै
इक दिन फेरि परैगा गाढा । मुशुक बांधि यम करिहैं ठाढा
तुम मति जानो अमर है काया । यह दीसै सुपनेकी माया
यहि चकचौंध भुलो मति कोई । सेंवल फूल जैसा तन होई
जैसे नींद में सुपना आवै । जागि परै तब कछू न पावैं
यह तन ऐसे देखो भाई । झूठे झूठ मिलैं सब आई
दिनाचार चटक दिखलावै । अन्तकाल ग्रासन कूँ धावैं
काल जंजाल सों छूटा चाई । गुरुसे प्रीति करो रे भाई
सतगुरु ऐसी युक्ति लखावै । जासे जीव परम पद पावैं
सुनो जीव अबूझकी बाता । जनम गवाँवै करम कमाता
हर्ष मोह मैं सबहि सुनाऊँ । जेते घर में सबहि दिखाऊँ
एक वर्ष लगि डोल डोलावै । पशू रूपमें जनम गँवावै
उखली जीभ तोतला बोलै । मातु पिता सब हर्षित डोलै
आल जंजाल बोले बहकावे । त्यों त्यों हरष हिये नहिं मावे
परी करै औ ऊभा धावै । बाहर भीतर दौडा आवै
कंचन घूंघुर बेगि गढ़ाई । रेशम केरी डोर पोवाई
सोना रूपा बहु पहिराया । हीरा मोती भूल भुलाया
बालन सँग में खेलन जावै । नाच कूद के घरही आवै
मन में आनँद करै चँचलाई । सोच फिकर कछु ब्यापे नाई
करै कुतूहल मनमें सोई । दिन दिन तेज सवाया होई
आकुल बोलै सोच न आनै । कूर कपट कर बहु मुख गानै
संकट का दिन चित्त न आवै । करै अनीति जोई मन भावै
चित्तमें दुर्मति रहै अति घनी । महा दुष्ट बुद्धि पापी सनी
द्वादश वर्षकी भयी है देही । अनन्त उपाय करै नर केही

प्रकट काम काया के भीतर । सोचफिकिर नहिं व्यापे अन्तर ॥
अन्ध करै बहुत अहंकारा । निरखै तिरिया घर घर द्वारा ॥
परवश दूती आनि मिलावै । जोर करै तो पकरि मँगावै ॥
नाहकको तू कान लगावै । नहिं मानै तो यम घर जावै ॥
अघ करमी होय तनडोलै । जोर बहुत गरभ सो बोलै ॥
आंखिन माहीं बर्षे लोई । ज्ञान ध्यानकी सुधि ना होई ॥
गुरु चरचाके निकट नजावै । हँसी मसखरीसों मन भावै ॥
झूठी बात करै लबराई । तासों हेतु करै मितराई ॥

साखी-यह नर गरभ भुलाइया, देखि मायाको झोल ॥
कहै कबीर सब चेतहू, सुमिरि पाछलो कौल ॥

चौपाई ।

इन्द्री स्नेह न मानै चेता । माया गर्ब फिरै मैंमंता ॥
ईगुण प्रगटा अन्तर माहीं । कामातुर होय करी विवाही ॥
पहले विवाही एक लुगाई । बहुत प्रेम सँग ताहि लिवाई ॥
विषय विवेकफिरउपजा भारी । पीछे व्याही सुन्दरी नारी ॥
अँगस्वरूपकामिनि अधिकाई । कामातुरसों रहे लपटाई ॥
महा अनन्द भये मन माहीं । एक पलक सँग छाडें नाहीं ॥
करै खवासी कहत है दासी । बन्धा मोह जाल की फांसी ॥
खिदमतगार सहेली घनी । कई नायिका कई रामजनी ॥
नव नव खण्डके महल बनाये । सेना केरे कलस चढाये ॥
करी बिछावन तहँ बडभारी । गादी तकिया बहुत अपारी ॥
बहुत मोलको अतर मंगावै । फूलन केरी सेज बिछावै ॥
कहँ लगिबरनू यह विस्तारा । मायाविनको बार न पारा ॥
टपका स्वाद भया नर अन्धा । आवै यम तब करै बहु फन्दा ॥
नित नित त्रिया नई संयोगा । खान पान और षट रस भोगा ॥

मता बिषय रस कछू न सूझे। भैरों भूत शीतला पूजे ॥
भूले कौल गरभकी बांधी। अब चकचौंधी आई आंधी ॥
सबही जीव कौल करि आवै। बाहर निकसि सब बिसरावे ॥

सतगुरुक आगमन।

ऐसे जीव भूल रहे सारे। तब सतगुरू आइ पगु धारे॥
जीवचितावन सतगुरु आये। अलीदास धोबी समझाये ॥
और हंस बहुत चेताये। फिरत फिरत पाटन पुर आये ॥

सतगुरुका पाटनपुर म पहुचना।

सतगुरु आये पाटन ठाउँ। जगजीवन राय बसैतेहि गाऊँ ॥
राय न मानै भक्ति विचारा। हँसे भक्तको बारम्बारा ॥
भक्त रूप सब शहर निहारा। कोउ न मानै कहा हमारा ॥
तब आपन मन कीन विचारा। कैसे मानै शब्द हमारा ॥
जाइ बाग में आसन कीन्हा। गुप्त रहे काहू नहिं चीन्हा ॥
द्वादश वर्ष भय बाग सुखाने। सुलगे काष्ठ होय पुराने ॥
चार कोस तेहि बाग लँबाई। तीन कोसकी है चकलाई ॥
तहां जायआसन हम कीन्हा। रहों गुप्त काहू नहिं चीन्हा ॥
तहँवां मैं कौतुक अस कीया। सूखे बाग हरा कर दीया ॥
विकसे पुहुप जीव सब जागे। सबने हरियर देखा बागे ॥
माली जाय कै दीन बधाई। जागा भाग तुम्हारा भाई ॥
देखा बाग जाय तेहि वारा। फल फूलनका अन्त न पारा ॥
हर्षा माली बाहर आया। देखा बाग बहुत सुख पाया ॥
फूलन छाब भरी दुई चारी। नाना विधिके फूल अपारी ॥
नाना विधिके मेवा लाया। लै माली दरबारे आया ॥
बैठा राजा सभा मंझारा। उमरावनको तहाँ न पारा ॥
माली सब लै धरी रसाला। राजा पूछ करे ततकाला ॥

राजा जगजीवन बचन।

कौनदेश तैं माली आया। फूल अनूप कहांसे लाया ॥
कौन बागके फलन विशेखा। कानो सुनी न आंखन देखा ॥

माली बचन।

नौ लखा बाग हरा होय आया। फल प्रसून सब नये बनाया ॥
सुनिके राजा हरषा भारी। संग उठि चली परजा सारी ॥

राजाबचन।

कहु दिवान यह कौन प्रकारा। समझि बूझिके करो विचारा ॥
ज्योतिषी पण्डित सबै बुलाये। पत्रा पोथी सबही लाये ॥

ज्योतिषि बचन।

लगन सोधि सब ऐसी कही। कोई पुरुष यहँ आये सही ॥
कोइ नर कै कोई पखेरु। सोधो जाय बाग सब हेरू ॥
हेरै राय बागके माहीं। बैठे संत यक ध्यान लगाहीं ॥
राजा जाय धरा तब पाई। नगर भरेकी परजा आई ॥
कहे राजा धन मेरो भागा। दर्शन पाय अमर होय लागा ॥
आलसी घर गंगा आयी। मिटि गई गर्मी भयी शितलायी ॥

सतगुरु बचन।

तब राजासों कही पुकारी। सुन राजा एक बात हमारी ॥
हम जनि भार चढाओ भाई। काहे को तुम देहु बडाई ॥
अच्छा बाग विमल हमचीन्हा। तासों आये आसन कीन्हा ॥
ऐसा तुमहीं बाग बनाया। नाना विधि के रूख लगाया ॥
आसन किया देखि हम ठारी। बहुत फूल फलकी अधिकारी ॥

राजा बचन।

फिरि कै राजा शीस नवाया। द्वादश वर्ष भये बाग सुखाया ॥
सूखा बाग भये बहु बारा। नहिं कोई लोक आहे संसारा ॥

छाडी फल फूलनकी आसा । कोइन आवै बागके पासा ॥
तुम समर्थ पग धारे आई । हरा हुआ बाग सब ठाई ॥
राजा कहै दया अब कीजै । मोकूँ मुक्तिदान फल दीजै ॥
मेरे मस्तक धरहू हाथा । मैं रहूँ सतगुरु तुम्हरे साथा ॥

सतगुरु बचन ।

तुमको कौल भुलाना भाई । किया सो कौल गया विसराई ॥
संकट गरभ में बाचा दीन्हा । बाहर निकसि करमबहु कीन्हा ॥
किया कौल जब गये भुलाई । तब हम आइके चरित दिखाई ॥
बहु विधि बात कही चेताई । बाहर निकसि बुद्धि पलटाई ॥
तुमको तो कछु सूझत नाहीं । फन्दा मोहजाल के माहीं ॥
आवै यम दश द्वारा मून्दी । तबहीं बांधि करैगा कुन्दी ॥
सोच बूझ देख मन माहीं । इतने में तेरा कौन सहाहीं ॥
पिशुन मिलैं सब वार न पारा । नरक बास में नाखन हारा ॥
बहु विधितुम सो शब्द पुकारा । किया कौल नर भूल गवाँरा ॥
घर घर हम सब कही पुकारी । कोइ न मानै कही हमारी ॥

हे राजा जब तू मातृगर्भमें था तब तू वचनबद्ध हुआ था कि भजनके अतिरिक्त अब और कुछ न करेंगे । उस दुःखमें तो तू पुकारता था तथा हाय हाय करता था कि, मुझको इस दुःखसे निकालो । जब तू गर्भके बाहर आया तब तू अपनी प्रतिज्ञा भूल गया और शारीरिक कामना तथा पशुधर्मके वशीभूत होकर तूने कौन कौनसे कुकर्म्म न किये ! सत्यगुरुकी दयाको तू एकबारगी भूल गया, भोग विलासमें फँसकरअन्धा होगया और मायाने तेरे ज्ञानको बिलकुलही नष्ट करदिया जब यमदूत आवेंगे और तेरी मुश्कें बाँधकर नरकमें लेजावेंगे तब तेरा कौन मित्र सहायता करेगा ? और तुझको उनसे कौन छुडावेगा? राजा तू सोच तथा समझ कि, वे लोग जिन्हें तू अपना

मित्र समझताहै उनमेंसे कौन तेरा उस समय सहायक होगा ? कौन तुझको नरकसे बचावेगा गर्भमें मैंने तुझको बहुत समझाया था सो हे गँवार ! तू उन सब बातोंको भूलगया मैंने सबसे घर घर पुकारकर कहा मेरा कहना किसी मूर्खने न माना । इतनी बात सुनकर राजा बोला ।

राजा वचन-चौपाई ।

अब तो गुरू होहु सहाई । मोकों यमसे लेहु छुड़ाई ॥
सबही करम बख्शके दीजे । डूबत मोहिं उबारके लीजे ॥
सैन करी पालकी मँगाई । लै सद्गुरु को माहिं बिठाई ॥
पाँव उघार काँध धर लीन्हा । तबही महल पयाना कीन्हा ॥
सद्गुरु पग धर महलके माहीं । सब रानिनको राय बुलाहीं ॥
समरथ दरशन दीन्हा आनी । धनधन भाग्य तुम्हारो रानी ॥
सद्गुरु को पलँगा बैठाई । सब मिलि पाँव पखारो आई ॥
राजा भाखै शीश नवाई । मोको राखो गुरु शरनाई ॥
करियै सद्गुरु जीवको काजा । दया करो मैं लाऊँ साजा ॥
अब हम शरना लेब तुम्हारी । दया करो तन दुखत हमारी ॥

सतगुरु वचन ।

तब कहे सतगुरु लेहु सँभारी । राजा सुनहू बात हमारी ॥
कस चले राजा लोक हमारे । मैं नहिं देखूं लगन तुम्हारे ॥
कोटिन ज्ञान कथे असरारा । बिना लगन नहिं जीव उबारा ॥
जो कोइ बूझे भक्ति हमारी । ताको चहिये लगन सँचारी ॥
जैसे लगन चकोरकी होई । चन्द्र सनेह अँगार चुगोई ॥
ऐसे लगन गुरूसे होई । धर्मराय शिर पग धर सोई ॥
तुम तो हो मोटे महराजा । कैसे छोडिहौ कुल मर्यादा ॥
कैसे छोडिहौ मान बड़ाई । कैसे छोड़िहौ मुख चतुराई ॥
कैसे छोडिहौ हाथी असवारा । कैसे छोडिहौ ग्रंथ भँड़ारा ॥

कैसे छोडिहौ काम तरङ्गा । कैसे राजसे करो मन भङ्गा ॥
कैसे छोडिहौ कनक जवहिरा । कैसे छोडिहौ कुल परिवारा ॥
तुम तो उनकी बाँधी आसा । हम तो राजा कथैं निरासा ॥
जो तुम तजु अन्तरकी बाथा । तबहीं चलो हमारे साथा ॥
भक्ति कठिन करी ना जाई । काहे को हिर्स करत हो राई ॥

राजा वचन ।

राजा कहे दोऊ करजोरी । सुनिये समरथ बिनती मोरी ॥
नगरके सब षट् वरन बुलाऊँ । यहि अवसर सब माल लुटाऊँ ॥
तुम तो कह्यो बाहर लेव वासा । मैं तो देहकी छोडों आसा ॥
अमृत वचन पियाओ आनी । हंस उबार करो निरबानी ॥
नगर कोटकी छोड़ी आसा । निशि दिन रहूँ तुम्हारे पासा ॥
हुकुम करो सोई मैं लाऊँ । करो दया मैं शीस नवाऊँ ॥
उमँग उठे हर्षित मन मोरा । थकित भये जनु चन्द्र चकोरा ॥
सूखा बाग जो फल परकाशा । तबते पूजी मनकी आशा ॥
कसनी कसो सो सहूँ शरीरा । तबहूँ प्रीत न छोडूँ तीरा ॥
जो तुम कहो सो भक्ति कराऊँ । दया करो तो शीश चढाऊँ ॥

सतगुरु वचन ।

तब समरथ अस शब्द उचारा । अब आरति का करो विस्तारा ॥
चार गुरूको चौक पुराओ । तिनका तोरायके जल अरपाओ ॥
राजा गर्भ निवारौं तोरा । भाव भक्तिसे करो निहोरा ॥
भाव भक्ति हम चाहैं राजा । धन सम्पतिसे ना कछु काजा ॥

राजाबचन ।

दया करो सो साज मँगाऊँ । कौन वस्तु लै आगे आऊँ ॥
मैं हूँ जोव मतीका भोरा । कहँ जानू चौका के ब्योरा ॥
समरथ कहो मैं आनूँ सोही । चौका जुगति बताओ मोही ॥
करहु गुरु चौका विस्तारी । जीवहि यमसो लेहु उबारी ॥

सतगुरु वचन ।

चार गुरू को साज मँगाओ । चार सवा सौ पान लै आवो ॥
चार सवासेर कन्द मँगाओ । आठ अंश नरियल लै आओ ॥
चार माला अरु लोटा चारो । सतगुरु आगे लाकर धारो ॥
चार थाली चार गादी कीजे । चार चँदोवा ताने लीजे ॥
चार कलस जल भरि धरवाओ । तब सतगुरु के आगे आओ ॥
सब यह साज आगे धरि दीन्हा । तब सतगुरु से विन्ती कीन्हा ॥

राजा वचन ।

मैं हूँ जीव करम बहु कीना । कैसे यमसों करिहो भीना ॥
गिनत गिनत नहिं आवे चीना । वारम्वार मैं औगुन कीना ॥
ऐसा करम किया मैं भारी । कैसे यमसे लेहो उबारी ॥
एक बात गुरु कहो विचारी । मो सम पतित आगे कोइ तारी ॥
तब सतगुरु बहुत विहँसाने । फिर राजासों निरणय ठाने ॥

सतगुरु वचन ।

सतयुग सत्यसुकृत मम नाऊँ । जाइ मथुरा में धारेउँ पाऊँ ॥
खेमसरी ग्वालिनी उबारी । बहुत जीव लै लोक सिधारी ॥
द्वादश पहुंचे पुरुष हजूरी । और हंस द्वीपन मँझूरी ॥
त्रेता युगे मुनिन्दर नाऊँ । नगर अयोध्या धारे पाऊँ ॥
हंस बयालिस लीन्हा लारा । पहुँचे तहाँ पुरुष दरबारा ॥
और हंस द्वीप महँ गयऊ । जिन जैसी जिव देह बनयऊ ॥
अब द्वापरका कहूँ विचारा । नरहर राजका किया उधारा ॥
सात सौ हंस पावन कीन्हा । कुटुम्ब सहित पयाना दीन्हा ॥
चन्द्र विजय घर इन्दुमति नारी । संकट राजा लीन उबारी ॥
केता पूछो जीव सनेही । गिनत गिनत ना आवे छेही ॥
युगन युगन भव सागर आऊँ । जो समझे तेहि लोक पठाऊँ ॥

कैसे छोडिहौ काम तरङ्गा । कैसे राजसे करो मन भङ्गा ॥
कैसे छोडिहौ कनक जवहिरा । कैसे छोडिहौ कुल परिवारा ॥
तुम तो उनकी बाँधी आसा । हम तो राजा कथैं निरासा ॥
जो तुम तजु अन्तरकी बाथा । तबहीं चलो हमारे साथा ॥
भक्ति कठिन करी ना जाई । काहे को हिंसे करत हो राई ॥

राजा वचन ।

राजा कहे दोऊ करजोरी । सुनिये समरथ बिनती मोरी ॥
नगरके सब षट् वरन बुलाऊँ । यहि अवसर सब माल लुटाऊँ ॥
तुम तो कह्यो बाहर लेव वासा । मैं तो देहकी छोडों आसा ॥
अमृत वचन पियाओ आनी । हंस उबार करो निरबानी ॥
नगर कोटकी छोड़ी आसा । निशि दिन रहूँ तुम्हारे पासा ॥
हुकुम करो सोई मैं लाऊँ । करो दया मैं शीस नवाऊँ ॥
उमँग उठे हर्षित मन मोरा । थकित भये जनु चन्द्र चकोरा ॥
सूखा बाग जो फल परकाशा । तबते पूजी मनकी आशा ॥
कसनी कसो सो सहूँ शरीरा । तबहूँ प्रीत न छोडूँ तीरा ॥
जो तुम कहो सो भक्ति कराऊँ । दया करो तो शीश चढाऊँ ॥

सतगुरु वचन ।

तब समरथ अस शब्द उचारा । अब आरति का करो विस्तारा ॥
चार गुरूको चौक पुराओ । तिनका तोरायके जल अरपाओ ॥
राजा गर्भ निवारौं तोरा । भाव भक्तिसे करो निहोरा ॥
भाव भक्ति हम चाहैं राजा । धन सम्पतिसे ना कछु काजा ॥

राजाबचन ।

दया करो सो साज मँगाऊँ । कौन वस्तु लै आगे आऊँ ॥
मैं हूँ जीव मतीका भोरा । कहँ जानू चौका के ब्योरा ॥
समरथ कहो मैं आनूँ सोही । चौका जुगति बताओ मोही ॥
करहु गुरु चौका विस्तारी । जीवहि यमसो लेहु उबारी ॥

सतगुरु वचन।

चार गुरू को साज मँगाओ। चार सवा सौ पान लै आवो॥
चार सवासेर कन्द मँगाओ। आठ अंश नरियल लै आओ॥
चार माला अरु लोटा चारो। सतगुरु आगे लाकर धारो॥
चार थाली चार गादी कीजे। चार चँदोवा ताने लीजे॥
चार कलस जल भरि धरवाओ। तब सतगुरु के आगे आओ॥
सब यह साज आगे धरि दीन्हा। तब सतगुरु से विन्ती कीन्हा॥

राजा वचन।

मैं हूँ जीव करम बहु कीना। कैसे यमसों करिहो भीना॥
गिनत गिनत नहिं आवे चीना। वारम्वार मैं औगुन कीना॥
ऐसा करम किया मैं भारी। कैसे यमसे लेहो उबारी॥
एक बात गुरु कहौ विचारी। मो सम पतित आगे कोइ तारी॥
तब सतगुरु बहुत विहँसाने। फिर राजासों निरणय ठाने॥

सतगुरु वचन।

सतयुग सत्यसुकृत मम नाऊँ। जाइ मथुरा में धारेउँ पाऊँ॥
खेमसरी ग्वालिनी उबारी। बहुत जीव लै लोक सिधारी॥
द्वादश पहुंचे पुरुष हजूरी। और हंस द्वीपन मँझूरी॥
त्रेता युगे मुनिन्दर नाऊँ। नगर अयोध्या धारे पाऊँ॥
हंस बयालिस लीन्हा लारा। पहुँचे तहाँ पुरुष दरबारा॥
और हंस द्वीप महँ गयऊ। जिन जैसी जिव देह बनयऊ॥
अब द्वापरका कहूँ विचारा। नरहर राजका किया उधारा॥
सात सौ हंस पावन कीन्हा। कुटुम्ब सहित पयाना दीन्हा॥
चन्द्र विजय घर इन्दुमति नारी। संकट राजा लीन उबारी॥
केता पूछो जीव सनेही। गिनत गिनत ना आवे छेही॥
युगन युगन भव सागर आऊँ। जो समझे तेहि लोक पठाऊँ॥

शब्द हमारा मानै कोई । तौ नहिं जाय यमपुरी सोई ॥
इतनी बात कही समझायी । दिल राजाके प्रतीति समायी ॥

राजा वचन ।

धन्य भाग मेरा कुल कर्मा । कोटिन यज्ञ कियो तप धर्मा ॥
सत्यगुरु आय दरस मोहि दीन्हा। बूझत हंस उबार कै लीन्हा ॥
हो प्रभु मोर करो निर्वेरा । मैं तो चरण कमलका चेरा ॥
कहु संदेश नगर में भाई । जय जीवन राय लोकको जाई॥
नेगी जोगी सबहि बुलायी । और नगरकी परजा आई ॥
चन्दनका सिंहासन कीन्हा । चौका पूरि कलश धरि दीना ॥
सतगुरु शब्द उचारे लीना । युक्ति साजि गादी पगु दीना ॥
सब रानिनको बेगि बुलायी । करि दण्डवतगुरु चरणा आयी ॥
जीव प्रति नरियल ले आये । सो सतगुरुको आनि चढाये ॥

साखी—सब रानी विन्ती करैं, सुनु समरथ चित्त लाय ॥
महा अकरमी जीव हम, सबहि लेहु मुकताय ॥

चौपाई ।

जेठी रानि चन्द्रमति जोई । सतगुरुकी गति जानी सोई ॥
दूजी रानी है मनकी युक्ती । निर्भय होय करै गुरु भक्ती ॥
तीजी रानी है मनपोई । लज्या कारण ना मानै कोई ॥
चौथी रानी भानुमति आही । जीवत सती सुजानो ताही ॥
पाँचवीं रानी धन्ना बाई । कलावंत होय आगे आई ॥
छठवीं रानी प्राणप्यारी । पूजे संत वह लाज निवारी ॥
सतई रानी है सत भामा । निर्भय होय जपै गुरु नामा ॥
अठवीं आनन्दकला है रानी । सतगुरुसों प्रीति निज ठानी ॥
नौवीं रानी नामपियारी । भक्तिवंत जानै संसारी ॥
दशमी रानी है दिल दायक । सब रानीकी सो है नायक ॥
ग्यारहवीं रानी है रंगरोपा । ताके कारन राव नहिं लोपा ॥

बारहवीं रानी सूरजमती। हंस रूप है ताकी गती ॥
द्वादश रानी सब बनि आयी। एक अंग होय सब भक्ति करायी॥
राजा छडीदार पठवाई। तो वो कुँवर को लाय बुलाई ॥

छडीदार वचन।

छडीदार कहै कर जोरी। राज कुँवर सुनु विन्ती मोरी॥
राज रानि गुरु चरणे आये। ताते तुमको बेगि बुलाये॥
गरभवाससों करैं निरुवारा। तुरत चलो जनि लावो बारा॥

कुवँर वचन।

तुम छडिदार कहो बात विचारी। कैसा गुरु है सो अधिकारी॥

छडीदार वचन।

हम मति हीन कछू नहिं जाना। निश्चय आही पुरुष पुराना॥
यह सुपने नाहीं कहुँ देखा। सुर मुनि नारद शारद पेखा॥

कुवँर वचन।

कुवँर वीनती कीन सुहाती। सुनतैं बात जुडानी छाती॥
हंस रूप चारों हैं भाई। उमंग हरष हिये नाहिं समाई॥
जहाँ सतगुरू आसन कीन्हा। कुवँर चार आइ दर्शन लीन्हा॥
बडा कुवँर वह सूरजभाना। गुरु स्वरूप हृदय में आना॥
दूजा कुवँर इन्द्रमन दासा। शब्दै पीवै शब्दकी आसा॥
तीजे कहिये चतुर्भुज कुमारा। शब्द सुनत वह सीस उतारा॥
चौथा कुवँर विक्रम दासा। जिन तन मनकी छोडी आशा॥
चारो कुवँर धरे गुरु पाई। तन मन धन सब प्रीति चढाई॥
कदली केर पनवार धरायी। गज मुक्ता हल चौक पुरायी॥
नरियल मोरिके मालूम कीन्हा। लिखि परवाना सब कूँ दीन्हा॥
इतने हंस भये मन भावन। तिनको सतगुरु कीन्हा पावन॥
तन मन धन सो बदला कीन्हा। शिरके सांट साहबको चीन्हा॥
करी निछावर मेटे गर्भफेरा। अब तो भई भगतिकी वेरा॥

सतगुरु बचन ।

तुमरी राय भली बनि आही । तुम गरभबासकी कौल निबाही ॥
जोई कौल गरभका पालै । ताको सतगुरु होहिं दयालै ॥
गरभ कौल कोइ चूकै भाई । असँख्य जन्म चौरासी जाई ॥
साखी—गरभ कौल चूकै नहीं, वोही हंस सुजान ॥
चौरासी भरमें नहीं, सो पहुँचे वहि परमान ॥

राजा बचन—चौपाई ।

राजा कहै दोउ कर जोरी । सुनु समरथ यह विन्ती मोरी ॥
महाकुकर्मी जो होय प्रानी । करमनसे कैसे होय छुटानी ॥

सतगुरु बचन ।

तब समरथ गुरु शब्द उचारा । करमन काटि करूँ निरवारा ॥
असंख्यजन्मकर्मकियआयी । पान पान में करम कटायी ॥
जो जिव कर्म करै निरबारा । पाख पाख में कर्म सुधारा ॥
विना पान नहिं कर्म कटाई । कोटिन ज्ञान करै जो भाई ॥
रेखा गुंज विचारै जानी । विना गुंज करै जिव हानी ॥
युग छत्र सो हंस उबारा । छत्र मुनी से उतरे पारा ॥
युग बन्धन ते शिष्य करीजै । असंख्यजन्मका कर्मजो छीजै ॥
जैस जीव तैसा होय पाना । सबही करम होय छय माना ॥
लगन जैमुनि आवै हाथा । धर्मराय तेहि नावै माथा ॥
गुरुशिष्य युक्ति एक जो आवै । पारसपान छत्र मुनि पावै ॥
पान एकोतर लैहैं जाई । असंख्य जन्मका कर्म नशाई ॥

राजा वचन ।

राजा सतगुरु विनतीलायी । लगन जमुनि देहु बतायी ॥
लगन जैमुनी कैसे पावै । कैसे सतगुरु सों लौ लावै ॥
कौन जुगति चरनामृत लेही । कैसे करै जो बनै बिदेही ॥

कौन वस्तु कहां लै आवै । काइ भेट गुरु आगे धरावैं ॥
लोकलोक गुरु कहो समझायी । कहो हंस कहँ जाय समायी ॥
कैसे पावै लोक निवासा । कौन कौन घर करिहैं वासा॥

सतगुरु बचन ।

तब सतगुरु अस बचन उचारा । शिष्य होय सौपूँ भंडारा ॥
शिष्य होय सँवारे देही । लोक द्वीपकी गम्य तब लेही ॥
शिष्य होय गुरुवश करलीजै । तन मन धनही नश्वर कीजै ॥
जो कछु आपन भक्ति करावै । पान पान सँग लोक पहुँचावै ॥
ताकी देह बनत है भाई । तामें हँस तब जाय समाई ॥
जोइ वस्तु ध्यान माँहिं चढावै । सोइ हंसा सत्यलोक पहुँचावै ॥
ताका नाम रेवती भाई । विना शिष्य कोइ पावै नाई ॥
तन मन धनको नेह न आवे । तब जिव लगन जैमुनी पावै ॥
तब राजा मन हरष अपारी । करहु शिष्य जाऊँ बलिहारी ॥

कुवँर बचन ।

कुवँरकहै विलम्ब किमि सारूँ । दया करो हो शीस उतारूँ ॥

रानी बचन ।

रानी मनमें हर्ष अनन्दा । मानों ऊगे कोटिक चन्दा ॥
तन मनसे करिहौं गुरु सेवा । हमको शिष्य करहु गुरु देवा ॥
अन्तर बात सब देहु बतायी । जैसे सीप मोती कूँ भांयी ॥

सतगुरु बचन ।

करनी कठिन सत्य करिजानो । कहनि करनि बहुभेद बखानो ॥
कठिन करनी टले जो भाई । ताकर जीव बहुल दुख पाई ॥
शिष्ट होय जब कौल बँधावे । तनमन धन सब आनि चढावे ॥
किये कौल निबाहे पूरा । करे गुरु सेव शिष्य सोइ शूरा ॥
पूरा होय के शूर कहावे । सतगुरु बचन सदा लौलावे ॥

---

१ भाव ।

करी कौल निर्बाहे नाहीं । ऐसो शिष्य सो यम मुख जाहीं ॥
तन मन चढावे वही सुख पावे । आखिर धन यौवन बहि जावे ॥
कौल करे सो जाल भुलाई । अँटके भव में नाहिं सहाई ॥
किया कौल टालि जो देई । बहु दुख संकट माथे लेई ॥
होय दुखी दुख देह समावे । ताकी देह रोग है आवै ॥
गुरु को दोष देहु जनि कोई । आज्ञा मेटे सजा तेहि होई ॥
सो जिव कही न उतरे पारा । करन द्वेष जो गुरु से धारा ॥
अन धन ताकहँ चहिये भाई । जापर सतगुरु होंहि सहाई ॥
कर्म सतगुरू दया कटावे । साहब ध्यान सो फल यह पावे ॥
गुरू छोडि जो कर्म करावे । तन मनमें जो लीन रहावे ॥
सो नहिं पावै वस्तु अपारा । मनमें देखहु करहु विचारा ॥
सहज भक्ति करो तुम भाई । होय शिष्य नहिं डर कछु ताई ॥
सहज भक्ति राजा तुम करहू । शिष्य होइ भक्ति पद तरहू ॥
सहज भक्ति सबही सुखदाई । कठिन कमाई दुस्तर भाई ॥
कठिन कमाई खाडँकी धारा । सहज भक्तिसे उतरो पारा ॥
सदा सुखारि भक्ति रस पीजै । सूली ऊपर घर नहिं कीजे ॥

राजा बचन ।

सब कर्म कठिनसहज कर जानू । तनमन धन कर लोभ न आनु ॥
हमको सीख अब देउ गुसाईं । कौल करूँ सो चूकूं नाईं ॥
जो कहुँ चूकि कौल हम जावें । अपनी करनी हम भरि पावे ॥
कौल चुके सो मूँढ गवारा । विनु स्वारथ जग होवे ख्वारा ॥
रंकके हाथ रतन जो आवे । कौडी बदले काह गवाँवे ॥
अब सतगुरु दाया मोहि कीजे । चूके कौलका फलहि कहीजे ॥
फिरि कैसे सो सुख पावै । कैसे वह फिर कौलमें आवै ॥
कैसे निर्धन धनै बहोरे । कैसे रोगी रोग सो छोरे ॥
अब करु शिष्य शब्द मुहि दीजे। नहिंतो देह त्याग हम कीजे ॥

साखी–चरण बन्दुँ कर जोरिके, सतगुरु सुनो पुकार ॥
लगत जैमुनि जब मिले, तबही करब अहार ॥

सतगुरु बचन–चौपाई।

ऐसे कष्ट करो मत भाई। करो विचार मैं कहुँ सुनाई ॥
करो आरती साज मँगाओ। लेई पान परम सुख पाओ ॥
प्रथम सिहाँसन लाइ बिछाओ। सर्वजीव एक सुरतिहोय आओ ॥
सवा से पान जीव प्रति लाओ। सवा सेर महाकन्द मँगाओ ॥
कपडा बस्तर धातु धराओ। ताँबा पीतल वर्तन लाओ ॥
सोना रूपा मोती हीरा। लाल जवाहिर बने सो चीरा ॥
जैसो साज जोई लैं आवे। तैसो हंसा देह बनावै ॥
इतनी साज नहीं बनि आवे। ताके हेतु यह गौ ठहरावे ॥
गौ नाम पृथ्वी का होई। पृथ्वी नाम यह देह संजोई ॥
सोधन चले अग्रकी धारा। अगर वास तहँ होय अपारा ॥
पान संग सो देउँ पहुँचायी। लोक जात सो बार न आयी ॥
जब सतगुरु आज्ञा फरमायी। तब राजा सब साज मँगायी ॥
सबही राज जब आनि धरावा। तब सतगुरुको तख्त बठावा ॥
जुगति साजि चरणामृत लीन्हा। तन मन धन अर्पण करदीना ॥
पुनि सतगुरु पान सो लीना। जैसो जीव तैसो तेहि दीना ॥
पाइ पान सबही चित दीना। होय अधीन सत्य सुख लीना ॥
तब सतगुरु यक बचन उचारा। सबहीको कह्यो करन विचारा ॥

सतगुरु बचन।

सुनु राजा यक कहूं विचारा। मानो राजा कहा हमारा ॥
जो वस्तु तुम हम सो पाओ। राखो चेत नहिं अनत गँवाओ ॥
जुगाओ शब्दै करो कमाई। दृढ कारि राखो नहिं देहु गँवाई ॥
सेवा करत सुरति चलि जायी। तबहि कालघर बजे बधायी ॥
जे जिव शब्द सुरति पर चाले। सबही विधि सो होय निहाले ॥

साखी–शिष्य होय तनै छिपाइ, ताका कहूँ विचार ॥
कहैं कबीर निर्भय नहीं, निश्चय यमके द्वार ॥

राजावचन–चौपाई।

राजा कहैं सुनो गुरु मोरा। मैं लागत हूँ चरने तोरा ॥
सहस अठासी लोक बताओ। भिन्न २ कै मोहि बुझाओ ॥
कौन हँस कहँ करै बसेरा। सबही हंस कर कहँ २ डेरा ॥
उत्तर समरथ कहो बुझायी। यह सन्देह उठा मन आयी ॥
खेमसरी को कहा संदेशा। द्वादश हंस उन सँग उपदेशा ॥
चारो युगका कहा संदेशा। बहुते हंस बतायो भेशा ॥
बहुते जीवहि बोध बताये। तन छूटे सब कहाँ समाये ॥
बहुत हंस पहुँचे निज ठाईं। तिनकर पता कह्यो समझाई ॥
और हंस कहाँको गयऊ। ताका बहुत संदेहा ठयऊ ॥

सतगुरु वचन।

हो राजा तोहि कहि समझाऊँ। भिन्न २ कै वरनि बताऊँ ॥
जे जे जीव परवाना पावैं। सोसो जीव सत्यलोक सिधावैं ॥
परवाना की यहि अधिकाई। हंस विगोय ना कबहूँ जाई ॥
जो हंसा नहिं देह बनावै। सो सब मानसरोवर जावै ॥
मान सरोवर दीप अमाना। होइ है चार भानु परमाना ॥
परवाना की यह अधिकाई। योनी गरभ बहुरि नहिं आई ॥
ताते ताहि वृत्तान्त बतायी। सकल कामना तोर मिटायी ॥
सत्य सत्य सबको समझायी। जब गुरुको चरणामृतपायी ॥
जो कछु करै सुकृत कमाई। सो सब पान पर देहि चढाई ॥
हेत द्वीपमें पहुँचे जाई। तबही हंसा देह बसाई ॥
ऐसी बिधि जो पान चढावै। निज स्वरूप जीव सो पावै ॥
तापर हंस होय असवारा। पचासी पवन परे सरदारा ॥

जो ऐसी नाहीं बनि आवै । ताके पान संग वृषभ चढावै ॥
वृषभ चढावे पावे सोई । पहुप दीप रूप बहु होई ॥
वृषभ नाभ नील है भाई । उनकी शोभा बहुतहिं पाई ॥
नाम नील वरन है स्वेता । ताको रूप कहा कहु केता ॥
जो वृषभ नहीं बनि आवै । तो लै गौ सो देह बनावै ॥
गौ देह सो पान जो पावे । मंजुल करि वह हंस रहावे ॥
दश हजार सुर झलके देही । पहुँचे हंसा होय विदेही ॥
हीरा मोती लाल जवहिरा । पान जढे पुनि देह उजिहिरा ॥
बस्तर दे पुनि पान चढावे । ज्ञान दीपमें लै पहुँचावे ॥
पांच सौ सूर्य्य समान सरूपा । परसत तहँा सो होय अनूपा ॥
कंचन रूपा धातु चढावे । तैसो शोभा देहमों पावै ॥
कहूँ पुकार करो निर्वैरा । देह विना कहँ करै बसेरा ॥

राजा बचन ।

धरे राय सतगुरुको पाऊ । हो सतगुरु तुम हंस मुकताऊ ॥
सत्यगुरु मैं तुव बलि जाऊ । सर्व भेद तुम मोहिं बताऊ ॥
कछू न मोसे राखु दुराई । देत हौं तुमको पुरुष दुहाई ॥
जौ तुम कहौ करौं मैं सोई । तुमसों दिल पतियाना मोई ॥
कृपा करो मैं प्रीति लगाऊँ । कसनी देहु सो सकल सहाऊँ ॥

सतगुरु वचन ।

तब सतगुरू कहे समझायी । काहे को तुम देत दुहायी ॥
सबही कहों तुम पूछो तैसी । लोक राह है सो पुनि जैसी ॥
गहा बाँहि उबारूँतोहि राई । यहि हंसन की अहै कमाई ॥
जो तुम किरिया दीन्हा मोई । कछू न तुम सों राखूँ गोई ॥
यह कहि सतगुरु युगति बनाया । ले राजाको अंक मिलाया ॥
अंक मिला कटी सब माया । पारस रूप भई जो काया ॥

अंक मिलाया भयेनृप पारस । उघडी दृष्टि अधिक भै आरस ॥
लोक द्वीप दृष्टि में आई । भिन्न भिन्न सब द्वीप दिखाई ॥
भये राजा मन महा अनन्दा । मानो ऊगे पूरण चन्दा ॥

राजा वचन ।

धन सतगुरु तुम्हरी बलिहारी । बूडत जीव तुम लीन्ह उबारी ॥
अब सतगुरु प्रसाद कछु कीजै । महा प्रसाद जीवन को दीजै ॥

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै सुनो तुम राई । महा प्रसादकी जुगति बताई ॥
कंचन केरी थार मंगाओ । अमृतकी झारी भर लाओ ॥
आसन डारिके पुरुष बैठाओ । स्वेत बहुत सब हंस लेआओ ॥
इतना करि तब चरण खटारो । होय अधीन तब मनको मारो ॥
सुनि राजा सब युक्ती लीन्हा । सतगुरुको बहु बन्दन कीन्हा ॥
चरण खटारिपोंछि जबलियऊ । आसनबिठाय पुरुषकहँ दियऊ॥
तब सतगुरु अस करबे लीना । सीथ प्रसाद सबन कूं दीना॥
पाय प्रसाद भये बडभागा । शून्य महल मन मोहरा जागा ॥
कहै समरथ कहु कैसा स्वादा । कहत बनै नहिं बनत अघादा ॥
साखी-महाप्रसाद के करतही, निःतत्त्व होय जाय ॥
रंचक घट में संचरे, सतगुरु लोक दिखाय ॥

राजावचन-चौपाई ।

सतगुरु कहिये बात विशेखा । लोक द्वीप सबही हम देखा ॥
धन्य सतगुरु तुम्हरे बलि जाऊँ। लोक द्वीप सब दृष्टिहि पाऊँ ॥

सतगुरु वचन

चौका युक्ती नहीं बनि आवै । महा प्रसाद कै देह बनावै ॥
तुमसे राजा कहु समझायी । पाख मास में पानतुम पायी॥
पुरुष पान सो पावे जबहीं । अगम ज्ञान सो सूझे तबहीं ॥

यही ज्ञान मैं भेद समझायी । तुम हंसन से कहो बुझायी॥
हमारो प्रतिहार पान है भाई । पलपल खबर हंस की लाई ॥
सोई वस्तु लै लोक पहुँचावे । सोई पान संग हंसन आवे ॥
जाका तुमसे कहूँ विचारा । पान लहे सो हंस हमारा ॥
जैमुनि लगन पान जो पावे । निर्भय लोक हमारे आवे ॥
पान परख विन झूठ कडिहारा । धोखे लेइ जिवन कर भारा ॥
धर्मराय माँगि है पाना । जबही हंसा करे निर्बाना ॥
साखी–सबही पहुँचे लोकमें, चढै पानपर अंक ॥
कटे कर्म सब जन्मके, हंस होय निःशंक ॥

हंस (राजा) वचन–चौपाई ।

हंस कहे सुनो गुरुदेवा । जीव अवधि बताओ भेवा॥
जादिन अंत अवस्था आवे । ताकर भेद हंस किमि पावे ॥

कालज्ञान ।

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै सुनो रे भाई । अगम के भेद कहूँ समझाई ॥
भिन्न भिन्न करके भेद बताऊँ । अगम कहिके दृष्टि दिखाऊँ ॥
वर्ष छः मास मासका भाऊँ । पाख आठदिन बरनिसुनाऊँ ॥
इंगला पिंगलासुषुमनि नारी । चलै लगन सो लेहुविचारी ॥
पाँच तत्त्व है उनके पासा । वह सब आगम कहैं तमासा॥
स्याना हंस होय जो भाई । तिनको अगम देहुं बताई ॥
छः मासका भेद बताऊँ । अगम लहो सो कहि समुझाऊँ॥
दोय संक्रान्तिका भेद बतायी । एक मकर दूजा करक कहायी॥
मकर संक्रान्तिसूरज सो देखा । तत्त्व पृथ्वी स्वर सूर विशेखा ॥
जो सूर घरसूरज आवे । छः मास काया सुख पावे ॥
सूरज पेलि चन्द जो आवै । छः मासमें जीव चलावे॥

करक संक्रान्तिचन्द्र की भाई। जल तत्त्व ते चन्द कहाई॥
जब चन्दा घर चन्दा सोई। रोग व्याधि शोक ना होई॥
चन्द पेलिकें सूर समावे। मास छः में लोकहिं जावे॥
अब पाँच तत्त्वका कहूँ बखाना। जानेगा कोइ हंस सुजाना॥
परबत पंच काया के बारे। गुरु गम हंसा करे विचारे॥
पीत वरन है मन्दिर वारा। तामें पुरुष दरश गुरु सारा॥
स्वेत वरन है पुरुष परमाना। ताका दरश करे कोइ स्याना॥
तीजे लालवरन पुरुष परमाना। देखत हैं सो हंस सुजाना॥
चौथा हरा रंग है मूरत। ताको ध्यान धरि देखिये सूरत॥
पाँचवें स्याम वरन अधिकारा। सो देखै कोइ हंसा प्यारा॥
जो कोइ इनसूँ सुरति लगावे। स्वास स्वासकी खबर बतावे॥
रवि मंगल शनिश्चर वारा। तापर सूर होय असवारा॥
सोम शुक्र औ बुधवारा। ताका कहिये चन्द सरदारा॥
आपनि आपनि चौकी आवै। तौ यह जीव बहुत सुख पावै॥
चलै चूक चौकी कर फेरा। तौ काया नगर में होय बखेरा॥
गुरूवारका भेद बताऊँ। दो भावे गुरु दरस दिखाऊँ॥
एकै आवै एक न आवै। ता दिन जी बहुत दुख पाव॥
बार तिथि चौकी चूक करेही। तौ निश्चय ना बाचै देही॥
सरब भेद मैं तोहि बताया। विरले हंस भेद यह पाया॥
तुम सों हंस कहूँ समझायी। गुप्त भेद ना बाहिर जायी॥
अब हम पृथ्वी परिक्रमा जावें। भूले हंसन करें चितावें॥
तुम राजा बैठि राज कराओ। सार शब्द जपन चित लाओ॥

राजा वचन।

जब सतगुरु तहँ ऐसो कहिया। तब राजा मन चिंता भइया॥
राजा चरण धर्यो तब आई। तुम बिनु कैसे रहूँ गुसाई॥
हमको राखो चरण लगायी। नहिं तो देहु सत्य लोक पठायी॥

पल पल राय नवावै माथा। मोको कैसे छुडाओ साथा॥
गुरु विन कैसे रहौं अकेला। दिग दिग होये जीव न चेला॥

सतगुरु वचन।

सतगुरु कहै सुनो मोर भाई। हम संग रहो लै जाउँ लिवाई॥
सदा रहौ हंसन के पासा। हमको रहै हँसनकी आसा॥
देह सो दर्शन तुम्हे दिय राई। विदेही होय संग रहुँ सहाई॥
विदेही दरश जब हंसा पावे। देखि दरश होय अधिक उछावे॥
सतगुरु चलन खबर सब पावा। धीरे धीरे सब हंसा आवा॥
आये हंसा विन्ती करहीं। हे साहब हम धीर कस धरहीं॥
जो तुम जाओ सतगुरु साहब। हमहु संग सब तुम्हरे आयब॥
तुम विनु गुरु कैसे रहि जावे। जल विनु मच्छी ज्यों तडपावे॥
हम पाये आनँद दरश तुम्हारे। मोको न छोडो स्वामि हमारे॥

सतगुरु वचन।

काहे को हठ करत हो भाई। सबही हंस सुनो चित लाई॥
देह धरी अब करो सुख वासा। सदा रखो निजनामकी आसा॥
घर में रहि कुल धर्म निबाहो। जो सब साँचि भक्ति तुम चाहो॥

सब हंस वचन।

माता पिता त्रिया नहिं चहिये। सुत नारीसे नाहिं नेंह लगैये॥
सतगुरु तुमही हो यक सांचा। झूठा और सकल जग काचा॥
विनादर्श सो दुख हम पावें। नित चरणामृत कहँसे लावें॥
तुम विनु देह छूटि सो जावै। कहँ गुरु वचन बहुरि सो पावे॥
विना दरश सब जगकी माया। सबहि छुटे नाहिं चहिये काया॥

सतगुरु वचन।

सतगुरु कहै सुनो रे भाई। सबही रहो नाम लौ लायी॥
सदा रहूँ मैं उनके पासा। धरे ध्यान जो सांचकी आसा॥

सुनो हंस गहो पद सांची । ध्यान विदेह में रहि हो रांची ॥
इतना कहि सतगुरु बतलावा । सबको विदेह ध्यान समझावा॥
ध्यान पाइ आनन्द सबै भयऊ । सतगुरु दरश प्रत्यक्षहि पयऊ ॥
फिर सतगुरु राजहिं समझावा । सब हंसन को करहु चितावा ॥
पुनि हंसन से अस प्रभु भाख्यो । हमरे ठौर राय तुहि राख्यो ॥
हम सम राय को सबही जानो । हमसन राय को अन्त न मानो॥
तब सतगुरु तहँ ते पगुधारा । सब हंसन दुख भयो अपारा ॥
चलत गुरू सब सीस नवाया । करि मिलाप गुरु कण्ठ लगाया ॥
तुम सों राजा कहू चितायी । रहो सदा शब्द लवलायी ॥
चले गुरु समरथ जेहि बारा । रोवैं हंस बहैं जल धारा ॥
जैसे रंकहि रतन हिराना । जैसे भुजंग मणी बिसराना ॥
मानि सतगुरु आज्ञा लीना । विदेह ध्यान गुरु दर्शन दीना॥
ध्यानपाइ गुरु करैं सब भक्ती । काल नाल सब छूटी युक्ती ॥
केते दिवस ऐसे चलि गयऊ । तबहीं राजा आगम पयऊ ॥
सब हंसनको बेगि बुलायी । राजा कहै शब्द बतलायी ॥

राजा वचन ।

जेहि कारण हम भक्ति कराई । सो दिन अब पहुँचा है आई ॥
ताल पखावज वेगि लै आओ । शब्द चलावा मंगल गाओ ॥
बाजा बाजे बहुत बधायी । सबै त्रिया मिलि मंगलगायी ॥
सबही लोक खबर यह पायी । राय जगजीवन लोक सिधायी॥
पाटन नगर में बहुत उछावा । घर घर तिरिया करैं बधावा ॥
बैठे राजा आसन धारी । जुरे हंस जहँ बहुत अपारी ॥
ले परवाना बन्दगी कीना । सबहिं हंस परिकरमा दीना ॥
रानी पांच कुवँर दोय जाना । ❀ दासी चार हजूरी साना ॥

❀ इसके विरुद्ध दूसरी पुस्तकों में इस प्रकार लिखाहै ।
जब राजा यक शब्द उचारा । कौन कौन चलै हमारे लारा ॥

चार प्रधान सात उमराऊ। प्रोहित दोय हिये मन भाऊ ॥
इतना जन परवाना लीना। राजा संग सो प्याना कीना ॥
पावत वीरा जिव निस्तारेऊ। अमर लोक कहँ प्याना धारेऊ॥
दशमद्वार सो न्यारा द्वारा। जेही राह हँस पगु धारा ॥
धन्य भाग हंसन तब जाना। राजाके सँग कीन पयाना ॥
आये प्रथम धरम के डेरा। जह चौतरा रायधरम केरा ॥
धर्मराय जब लेखा मांगा। तब हंसा लेखा देनें सो लागा ॥
जिन जिन कौल चुकाने भाई। सो सो रहे धर्मकी ठाई ॥

जीववचनं धर्मराय प्रति।

जीव कहे सुनो धर्मराया। हम सतगुरुका परवाना पाया ॥
ज्ञान ध्यान हम बहुते जाने। और जाने अमर सो ज्ञाने ॥
हमको तुम काहे रोकत भाई। संगी हमारे आगे चल जाई ॥

धर्मराय वचन।

भूला जीव मुख करे चतुरायी। ऐसी बातन मुक्ति न पायी ॥
साखी गावें सब संसारा। का सबही जिव उतरे पारा ॥
जो जीव होएँ कौलके साचा। तिन सब पर हम पाले बाचा ॥
सतगुरु सेवा कीन बनायी। हमरे शिरसु पावँ धरि जायी ॥
भक्ति हीन छुए अंग हमारा। छूवउ अंग होय जरि छारा॥

तब इतने हंस आगे पगुधारा। संग जान को कीन विचारा ॥
रानी पांच कुवँर दोय जानी। दासी अष्ट नव हजुरी सानी ॥
पांच प्रधान ग्यारह अमराओ। छडीदार सात सो मन लाओ ॥
बारह कायस्थ सत्रह साहूकारा। बढई चार अरु सात लुहारा ॥
सत्रह सुनार अठरह बनजारा। चौकीदार चले संग चारा ॥
नव कुरमी सत्रह कोरी। तेरह कुम्हार सबै सर मोरी ॥
धोबी उजला धोवन हारा। पांच चले राजा की लारा ॥
छः चमार बन्दगी कीना। राजा के संग प्याना दीना ॥
पाजे बीरा जीव चालवा। निकसा जीव ठाठरी पढावा ॥

चार सहस्र से सात रुबावन। इतना जिव चलु लोकहिं ठावन॥
दोसै कौल चुकाने भाई। सो रहे धर्म राय की ठाई॥
चार हजार सात सै बावन। दोय सै धरमराज ठहरावन॥
चार हजार बावन सैं पाँचा। मानसरोवर पहुँचो सो साँचा॥
जहाँ कामिनी मंगल गावै। सजि आरति लै आगे आवै॥

कामिनी वचन।

करी निछावर बूझै बाता। कैसे आये यहि मग धाता॥
माया मोह बन्ध्यो संसारा। कैसे छाडे कुल परिवारा॥

हंस वचन।

कहे हंस सतगुरु गम दीन्हा। बज हम दर्शन तुम्हारा लीन्हा॥
देह बनी सो आगे आये। रहिता सब जिववहाँ रहाये॥
चार हजार एकसौ बावन। एते हंस तेहि ठावन॥
चार सौ आगे किया पयाना। हेतु द्वीप पहुँचे अस्थाना॥
मान सरोवर हंस रहायी। सब मिलि करहीं बहुत बधायी॥
सब पूछे कामिनि सों बाता। यह सब हंस कहां को जाता॥

कामिनी वचन।

कह कामिनि सुनु हंसा भाई। तुम गुरु कर कह कीन कमाई॥
परवाना की यहै बडावा। सो तुम मानसरोवर आवा॥
उन हंसन गुरु भक्ति करायी। जुगति जुगतिउन देह बनायी॥
आगे हेत द्वीप में जैहैं। हंस सुजन जन कंठ लगैहैं॥

हंस वचन।

सब हंसा मिलि विनती कीन्हा। हम चाहैं तुव दर्शन लीन्हा॥

साखी—बैठि हंस विन्ती करे, सुनु समरथ अरदास॥
देही सवारें लोकमें, उपजे प्रेम विलास॥

चौपाई-सुजनजन वचन ।

हंस सुजन जन कहैं सुनायी । सबही हंसा सुनो चितलायी ॥
जैसी देह सवाँरी हंसा । तैसी लेहु हमारे पंसा ॥

हंस वचन ।

चरणामृतहि तुर्त सो लीना । कैसी महिमा गुरु की कीना ॥

हंस सुजनजन वचन ।

कितने पान शिष होये पायी । कौन वस्तु तुम पान चढायी ॥
जैसि वस्तु संसार चढावे । वैसी देह इहाँ सो पावै ॥
इहाँ मोती वहाँ हीरा लैहो । तेहि सम रूप देह सो पैहो ॥
जैसी सवाँरे देह तुम दासा । वैसे लोक करो तुम वासा ॥
जिन वहि अवसर देह बनायी । मँजुल करी में बैठक पाई ॥
द्वादश सहस सुर हँसनको रूपा । बैठे हंस दीप सम भूपा ॥
गौ चढाय पान जिन लीन्हा । पुहुप दीप तिन हंसन चीन्हा ॥
आठ हजार सुरज परकासू । सब आनन्द होय सुख बासू ॥
वृषभ चढाय पान जो पावे । मंजु लोक महँ हंस सो जावे ॥
दश सहस सूर छवि छाजे । बैठे हंसा राज विराजे ॥
हीरा मोती लै पान जो पावे । उदय द्वीप में हंसा जावै ॥
तेहि हंस में सुरज की जोती । झलके रोम में जैसे मोती ॥
वस्तर देइकै देह बनावे । सो हंसा सुख सागर पावे ॥
वह तो ज्ञान द्वीप में जावैं । चार सुरज ज्योति तिन पावैं ॥
पैसा धातू बर्तन लायी । सुखसागर ध्यान लगायी ॥
पैहैं सो षोडश भानु सरूपा । बसै सो हंसा द्वीप समीपा ॥
तीन सै बत्तिस जिनदेह बनाये । आपन आपन द्वीप सिधाये ॥
पैसठ हंस पहुंचे निज ठाईं । जिन तो इलम फकीरी पाई ॥
कहै सुजन जन सुनो रे भाई । धनि धनि तुमरी अधिककमाई ॥
तुम्हरी सरवर कोउ न कीन्हा । तुमतो गुरु को वश कर लीना ॥

तन मन धनकी कौन चलायी। तुमतो आपा दिय विसरायी॥
इन सब हंसन देह बनायी। तुमतो देही गुन विसरायी॥
जो तुम कहो करौं मैं सोई। तुमरी सरवर नाहीं कोई॥
सुरति तुम्हारी अधिक सहाई। सतगुरु तुमरे प्राण समायी॥
यह वस्तु तुम कैसे चीन्हा। कैसे गुरुको वश करि लीन्हा॥
कैसे तन आशा विसरायी। कैसे इल्म फकीरी पायी॥
सब हंसनकी देह बनाऊँ। ताको तैसो दीप मिलाऊँ॥
सतगुरु वशि करि राखे पासा। सुनो हंस मुँहि तुमरी आशा॥
सदा सतगुरू हंस सनेही। तुम अर्पित सतगुरु की देही॥
सदा करै सतगुरु की पूजा। तुमसा हंस न देखा दूजा॥

हंस वचन।

हंस कहे सुन पुरुष पुराना। हम कहँ जानें जीव अजाना॥
हमतो हते भवजल के माहीं। महाअन्ध कछु सूझत नाहीं॥
तब समरथ गुरु आनि चिताया। बूडत देखि उबारन आया॥
जो गुरु कहा सोई हम कीन्हा। एक गुरू बिनु और न चीन्हा॥
तिन सों पूछ कीन कर जोरी। समरथ मानो विन्ती मोरी॥
हम नहिं चाहैं लोक औ द्वीपा। सदा रहैं गुरु चरण समीपा॥
तब गुरु कह्यो सुनो रे भाई। सर्व ज्ञान का मूल बताई॥
हमरे संग रहा जो चाहो। तौ तम सुरति कि देह बनाओ॥
और सकल झूठ कर जानो। एक गुरू हम सांचे मानो॥
तन मन धन सो बदला कीना। तब गुरु इल्म फकीरी दीना॥
तब गुरु आपा दिया मिटायी। देही को गुण दियो विसरायी॥
पान इकोत्तर से हम पाये। पान पान हम देह बनाये॥
लोक द्वीप हम कछू न चाहा। हमको सतगुरु दरशकि लाहा॥
हंसा सुरति गुरूकी कीन्हा। स्वरूप सहित गुरु दर्शन दीन्हा॥
सबही हंस धरेउ गुरु पाऊ। करि बन्दगि सब सीस नवाऊ॥

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै हंस सुनु बाता । कहां वे जीव तुम्हारे साथा ॥

हंस सुजनजन वचन ।

हंस सुजन मिलि अंक लगाये । कहो हंस कस कीन कमाये ॥

सतगुरु-वचन ।

इनकी मैं का करूं बडाई । ये तो सब निज हंसा आई ॥
निश्चय बात हमारी मानी । काया माया खाके जानी ॥
सतगुरु हंसको लोक चढायी । सहस अठासी द्वीप दिखायी ॥
जेहि जेहि हंस सवारी काया । द्वीप द्वीप सब दृष्टि बताया ॥
देखो हंस कह सब अस्थाना । देखो द्वीप सबही मन माना ॥
सबहीं हंस करे पछतावा । यह गति हम वहां नाहीं पावा ॥
लै हंसनको पहुँचे तहँवा । महापुरुष विराजे जहँवा ॥
साखी- द्वीप वर्नन कह कहौं, सबैं मनोरथ काज ॥
सबद्वीपनते न्यार है, सत्यपुरुष को राज ॥

चौपाई ।

जब हंसनको ले पहुँचाये । तब सतपुरुष उठि कंठ लगाये ॥
जब ही पुरुष अंक भरि लीना । पारस देह सब हँसन कीना ॥

पुरुष वचन ।

कहै पुरुष ज्ञानी भल आये । इतने हँस कवन विधि लाये ॥

ज्ञानी वचन ।

येतब जानो पुरुष पुरुष पुराना । मैं केहि मुख सों करौं बखाना ॥
चार हजार सातसौ बावन पाये । एते हँस दरश तुव आये ॥
सबही आये लोक मंझारा । दुइ सै रोके धरम वट पारा ॥
कौल किया पुनि गये भुलायी । पांजी द्वार धरम पर जायी ॥
मान सरोवर कैते रहाये । उनको देही नाहिं बनाये ॥

और द्वीपन सब कीन बसारा। जैसी हँसन देह संवारा ॥
इन तन मन सो बदला कीना । शिष्य होय इन वस्तुहिलीना ॥
जो सब सुना है ग्रन्थन नामा। सोई सब कीना इन कामा ॥
एकोत्तरसै पान इन पावा। नौ तम सुरती देह बनावा ॥
नेह कीन घर रहै जग मारी। काया के गुण दिया बिसारी ॥
कसनी कसि सो तन बदले चिन्हा।गुरुको इनसब वशकरिलीन्हा ॥
जीवत मृतक होय रहे जग माहीं । जासे दरस तुम्हारा पाहीं ॥
सुनिके पुरुष हरष बहु कीना । फिर फिर हंस अंक भर लीना ॥
कहा देउ तोहि हंस बडाई। तुमतो अमर लोक चलि आई ॥
अरध सिंहासन आसन पाये। सब हंसन शिर छत्र धराये ॥
हर्षित बदन औ बहुत हुलासा। सदा रहो तुम हमरे पासा ॥
बैठचो महा पुरुष दरबारा ।कोटिन सूर हंस उजियारा ॥
अमृत फलका करो अहारा। धन्य हंस बडभाग तुम्हारा ॥

पुरुष वचन ज्ञानीप्रति ।

ज्ञानी फेर जाओ संसारा। पृथ्वी जाय करो विस्तारा ॥
सब सों कहियो यहि उपदेशा । सबही चलो पुरुषके देशा ॥
साखी—कहै कबीर सुख अति घनो, पूरण प्रेम विलास ॥
यह सब जीव चितावनि, जगजीवन परकाश ॥

इति श्रीबोधसागरांतर्गत जगजीवनबोध-
नामकपंचमस्तरंगः समाप्तः ।

श्रीग्रन्थ जगजीवनबोध समाप्त ।

परिशिष्ट भाग ।

ग्रन्थसार ।

संसार में जन्म लेनाही दुखके महासागरमें पडनाहै । जन्मही शोकका सागर और भयका पहाड है। जन्मही अनेक कर्मोंका घर,

पातककी खान और कालके दुख देनेका स्थान। जन्म कुविद्या का फल, लोभका कमल और ज्ञानका आवरण है। जन्म ही जीव का बन्धन मृत्युका कारण और अनन्त जंजालोंका मूल है जन्म ही सांचे सुखका छल, चिंताका जंगल और वासनाओंका विस्तार है। जीवकी मिथ्या दशा, कल्पना का भण्डार और ममतारूपी डाकिनीका लीलास्थान जन्म ही है। मायाकी लीलाकी रंगभूमि तमोगुणकी गहरी और भयानक कूप और जीवको मोक्ष मार्गसे भटकानेकी जड जन्म ही है। जीवको मिथ्या देहाभिमानमें फँसाकर सत्य पदसे भ्रष्ट कर कालके नाना पाशोंमें फसानेवाला जन्मके सिवाय दूसरा कौन है? यदि जन्म न हो तो शरीरकी झूठी ममतामें पडाहुआ यह जीव मिथ्या विषय वासनामें लगकर अपने सत्य ज्ञानस्वरूपको भूलकर मिथ्या आशा और झूठी तृष्णा में फंसकर क्यों कालका चारा बने? यदि जीव शरीरके साथ सम्बद्ध न होता तो इसे नाना प्रकारकी विपत्ति और संकष्टमें पडकर दुःख उठानेकी क्या आवश्यकता थी? जन्म लेनेवाले शरीरका मूल विचार करनेपर इस शरीर ऐसी अपवित्र वस्तु कोई भी नहीं मिलती। रजोदर्शनवाली स्त्रीके मासिकस्रावके पश्चात् बचे हुए और पिताके शरीर से निकले हुए अपवित्र वीर्य्य द्वारा इस शरीरकी उत्पत्ति है। जब ऐसी अपवित्र वस्तुओंके संयोगसे यह शरीर बना है तब इसमें पवित्रताका कहाँ पता है। स्त्रीके रक्तके औटाने पर इस शरीरका लोथडा बनता है। यद्यपि ऊपरसे देखनेमें अपवित्र जनोंको यह सुन्दर देख पडता है तथापि भीतर तो वैसेही घृणित नरकका थैला बना हुआ है फिर यह शरीर कैसा देख पडता है, जैसे चमडे भिगोनेका चमारका कुण्ड हो। चमारका कुण्ड तो धोनेसे शुद्ध भी हो जाता है

किन्तु इसे नित्य प्रति धोने परभी न इसकी दुर्गन्धि जाती है न इसमें पवित्रता आती है।

हड्डियोंकी ठठरी बनाकर उसमें नस और नाड़ियोंका बन्धन लगाया है और मेद और मांससे इसे जोडा है, जिस लोहूका नाम ही अशुद्ध है उसी रक्तसे इस शरीरकी जब बनावट है तब इसकी पवित्रताका क्या ठिकाना है ? शरीर दुर्गन्धिसे भरा है क्यों कि अन्दर बाहर मलिन वस्तुओंसे ही इसकी बनावट हुई है। समस्त शरीरमें शिर सबसे श्रेष्ठ कहा जाता है किन्तु उसमेंभी नाकमें से सदा दुर्गन्धि बहा करती है और कान पकने पर ऐसी दुर्गन्धि निकलती है कि, निकट भी खडा नहीं हुआ जाता। आंखमेंसे कीचड और मुँहमेंसे थूक लार और दुर्गन्धि निकला करती है इस प्रकारसे समस्त शरीर अपवित्र और मलिन वस्तुओंसे बना हुआ है।

उत्तमसे उत्तम पदार्थ भी भोजन कर लेनेपर वह कई घण्टोंही में घृणित मल बन जाता है, निर्मल शुद्ध जल पीनेसे शरीरके संयोगद्वारा वह मूत्र हो जाता है और इन्हीं पदार्थोंसे शरीरका पोषण भी होता है। राजासे प्रजातक महान भक्त, राजासे महान पापी अघकर्मीतक सबके पेटमें ये अपवित्र पदार्थ भरे हुए हैं और इन अपवित्र पदार्थों का शरीरसे ऐसा सम्बन्ध है कि यदि कोई इन मलोंको शरीरसे निकाल कर शरीर को शुद्ध करना चाहे तो तुरत ही प्राणी मृत्यु को प्राप्त होवे। जिस समयमें यह जीव अपनी वासनाके अनुसार शरीर धारण कर माताके गर्भमें प्रवेश करता है और नव महीनेतक यह शरीर माताके उदरमें रहता है, उसमें नाक मुहँ आदि नवो दर्वाजे बन्द होते हैं और वायुका तो प्रवेश भी नहीं होता

उस समय में माता के शरीर में से जो अपवित्र रक्त निकलता है उसकी गर्मी द्वारा हड्डी और मांस जलताहै। ऊपरसे चमडेकी थली न होने के कारण बालकका मांसमय शरीर माताके तीखे चरपरे आदि पदार्थोंके सेवनसे महान कष्टित होता है। गर्भके ऊपर एक सपेद २ चमडा लपेटा होताहै और गर्भ मल मूत्र के नरक कुण्डके निकटही होता है तथा उसकी नाभीमें एक नली लगी होतीहै जिसके द्वारा गर्भका पोषण होता है। वात पित्त तथा विष्ठा आदि अनेक अपवित्र पदार्थोंसे और नाना प्रकारके पेट-के कीडों के नाक तथा मुहँ के पास फिरनेपर बालकका मन घबराता है। इस प्रकारसे अनेक असंख्य कष्टमें नव महीनातक कैद हुये जीवको अत्यन्त कष्ट और दुःखके कारण इसे प्रभु सद्गुरु स्मरण आता है तब उस समय अत्यन्त विनीत भावसे प्रार्थना करता है कि, "हे सद्गुरु! हे परमात्मन्। यदि इसबार कृपा करके मुझे इस कष्टमें से छुटकारा दे तो मैं अपने आत्माके कल्याणके मार्गको धारण कर फिरसे ऐसे कष्ट में आने से छुटकारा कर लूंगा" इसही प्रकार से अनेक समयतक प्रार्थना करते करते प्रभु की कृपासे समय पूरा होने पर माताके पेट में पीडा आरम्भ होतीहै। उससमयमें मुँह नाक और मस्तिष्क जो श्वासके मार्गहैं मांसके टुकडों से एकदम बन्द होजातेहैं, श्वासोछ्वासका द्वार बन्द होतेही बालकको मूर्छा आती है औरजीव अचेतनावस्थामें तडफडाने लगता है। तडफडाने में यदि शरीर आडा टेढा हुआ तब बाहरवाले लोग गर्भको काटकर निकालने की सम्मति देते हैं।यदि किसी युक्तिसे ठीक हुआ तो हुआ नहीं तो हाथ डाल कर बालकका जोई अंग हाथ आया उसीको काटना आरम्भ करतेहैं और क्रमशः काटकर उसे बाहर निकलते हैं बहुत बार ऐसा होताहै कि, स्वयम् बालक तो मरताही है उसके साथ २

माताका भी प्राण नाश होता है। यदि पूर्व पुण्यकी सहायता से शरीर सीधाही बाहर निकला तब प्रथम शिर बाहर आता है मार्ग छोटा होने से धाई शिरको पकडकर बल पूर्वक बाहर खींचती है इसमें भी कभी २ ऐसा होता है कि, शिर बाहर निकला और धड उसमेंही अटक जाताहै। उस दशा में बालककी मृत्यु होती है और संयोगसे माता बचगयी तो बालक के शरीर को काटकर बाहर निकालते हैं। यदि पुण्यवश सकल शरीर बाहर निकल आया और बालक जीता जागता रहा तो बाहर आतेही बाहर के पवन लगने से बालक को इतना कष्ट होता है कि, मानो सहस्र बिच्छुवोंनेंएक साथही डंक मारा हैऐसे असह्य कष्ट के कारण कभी २ बालक अचेत हो जाताहै तब उसको चेत दिलाने के लिये नाना प्रकार के उपाय किये जातेहैं कभी बालक को च्यूंटी काट कर जगाते हैं और कभी २ शस्त्रका प्रयोग भी करना पडताहै। और जब बालक रोताहै तब सबको आनन्द आता है इस प्रकार से महान कष्ट भोग कर यह जीव जब बाहर निकलकर संसारके पदार्थों को देखताहै और नाना प्रकार के मोह में फँसानेवाली माया के जाल माता पिता आदि की प्यारी २ बातोंको सुनता है तब गर्भ के कष्ट और प्रार्थना तथा वचन को भूलकर मोह मायामें फँसता हैऔर जगतके नाना प्रकार के क्षणिक सुख और दुःखमें पडा हुआ यह, साहिब और अपने स्वरूप को भूलकर भी कभी याद नहीं करता। इस प्रकार के गर्भका दुःख सर्व प्राणीको होताहै वही कथा इस ग्रन्थ में जगजीवन (जीव) के बहाने से ग्रन्थकारने लिखकर सबको उपदेश दिया है ॥

इति ।

भारतपथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित।

श्री-गरुडबोध।

खेमराज श्रीकृष्णदासने

मुम्बई

निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रकाशित किया।

संवत् १९८०, शक १८४५.

सत्य नाम।

श्री कवीर साहिव।

अथ श्रीबोधसागरे

षष्ठस्तरंगः।

ग्रन्थ गरुडबोध।

सोरठा- गुण गण जेहि अशेष, बने न वर्णत सहस मुख ॥
बदौं सोई हंसेश, सत्यकबीर जो प्रकट जग ॥

धर्मदास वचन।

धरम दास बिन्ती करै, सुनहू जगत उधार ॥
गरुड बोधको भेव सो, अब कहहू यहि वार ॥

सतगुरु वचन।

सत गुरु कहन तबहिं अस लागे। गरुड सो ज्ञान जेहि विधि पागे॥

सत्य पुरुष वचन।

आप पुरुष यक शब्द उचारा। हो सुकृत तुम जाहू संसारा॥
नाम पान तुम लेहु हमारा। जाय छुडावहु जिव संसारा॥
सत्य लोक ते करहू प्यानी। लेहु शब्द तुम बहु विधि वानी॥
लेहु शब्द अजरमनि ज्ञानी। सत्य शब्द बोलहु सहिदानी॥
आज्ञा मानि हमारी लेहू। जाय पाँव पृथ्वी तुम देहू॥
कहो सबन सों शब्द बुझायी। भक्ति प्रताप सत्तनाम सहायी॥

ज्ञानी वचन।

तब ज्ञानी उठि मस्तक नावा। तुव प्रताप हम हंस छुडावा॥
जुगन जुगन में हमहिं सिधाये। जिन माना तिनही मुकुताये॥

तब साहब मोहि दाया कीन्हा । बचन मानिहम शिरपरलीन्हा ॥
करि प्रणाम परदक्षिन कीन्हा । पाछे जगहिं पयाना दीन्हा ॥
यही भांति धर्मनि जग आवा । बहुत भाँतिते जिव समझावा ॥
प्रथम गरुड से भेंट जब भयऊ । सत्य नाम कह बोल सुनयऊ ॥
धर्मदास सुनु कह्यो बुझायी । जेहि विधि से ताही समझायी ॥

गरुड वचन ।

शीस नाइ तिन पूछा भाये । हौ तुम कौन कहाँ से आये ॥
कौन दिशा ते तुम चलि आऊ । अपनो नाम कही समझाऊ ॥

ज्ञानी बचन ।

कह ज्ञानी है ना हमारा । दीक्षा देन आयऊ संसारा ॥
सत्यलोक से हम चलि आये । जीव छुडावन जग महँ आये ॥
सत्यपुरुष मोहि आज्ञा दीन्हा । सत्य शब्द हम लेइ तब लीन्हा ॥

गरुड बचन ।

सुनत गरुड़ अचम्भो माना । सत्य पुरुष आही को आना ॥
प्रत्यक्ष देव कृष्ण कहावें । दश औतार सो धरि धरि आवें ॥

ज्ञानी बचन ।

तब हम कहा सुनहु तुम स्याना । सत्य पुरुष तुम नहिं पहिचाना ॥
अवतारन का कहो विचारा । इनते साहिब रहै नियारा ॥
जाकर कीन्ह सकलविस्तारा । सो साहब नहिं जग औतारा ॥
योनी संकट वह नहिं आवे । वह तो साहब अछय रहावे ॥
जहाँ लगे जो जगमें आये । तहाँ लगि सबही अंश कहाये ॥

साखी—ताते साहब अछय है, तीन लोक सों न्यार ॥
योनि संकट ना आवई, ना वह लेइ औतार ॥

गरुड वचन चौपाई ।

तबही गरुड जो बोलहिं बानी । कौन देश बसत है ज्ञानी ॥
हम बाहन हैं कृष्ण के भाई । तिनकी गति तुमहूँ नहिं पाई ॥

तीनि लोकके ठाकुर आही। तिनके आगे कौनको शाही ॥
तीनी लोकके ठाकुर कहिये । तिनके और कौनको गहिये ॥
सोई मोहि अब देहु बतायी । मोरे मन चिंता समुहायी ॥
दूसर कौन सो देहु बतायी । हमरे मन गुमान नहिं आयी ॥

ज्ञानी वचन।

सुनहु गरुड यक बचन हमारा । वह साहब है सब से न्यारा ॥
यह तो सबै ईश्वरी माया । उपजहिं विनसहिं बहुरि विलाया॥
वह नहिं आवे नहीं जाहीं । वहतो सदा अजर घर माहीं ॥
उनकी आज्ञा इन पर आवैं । तब इन गरभ बास सो पावैं ॥
तुमपर सदा कृष्ण असवारी । काहे न दाया करहिं विचारी ॥
हमतो शब्द संदेशी आये । योनी संकट नहिं निरमाये ॥
तब हम उसको तत्त्व लखावा । होइ विदेह तब बचन सुनावा ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुडै अस्तुति ठानी । तुम साहिब निर्गुण सहिदानी ॥
तुमहो प्रभू सगुण ते न्यारा । निर्गुण तत्त्व साहिब विस्तारा॥
धरि अस्थूलमोहि दरश दिखावा। निर्गुणशब्द प्रभु मोहि सुनावा ॥
अब गुरु मैं बन्दों तव पायो । अब जाना प्रभु तुम्हरो भायो ॥
निज प्रतीति हमरे मन आऊ । हंसराज मोहि दरश दिखाऊ ॥
अब प्रभु मोही दर्शन दीजे । हंस उबार आपन करि लीजे ॥
भेद तुम्हार सकल मैं पाया । धरि स्वरूप तुम दरश दिखाया॥

ज्ञानी वचन ।

देह धरी हम दरशन दीना । तब उन चरण बन्दना कीना ॥

गरुड वचन ।

शीश नाइ चरणन लपटाये । अब साहब मोहिं लेहु बचाये ॥
साखी-निगुण प्राण अधार तुम,दरश दीन्ह प्रभु आय ॥
आपन करि समझावहू, लेहु जीव मुकुताय ॥

ज्ञानी वचन—चौपाई।

अहो गरुड तुम चीन्हा भाई। दे परवान लेऊँ मुकुताई॥
बाहर भीतर सबै बताओं। तुमसों गरुड कछू न छिपाओं॥
अब तुम जाहु कृष्ण के पासा। आज्ञा मानि के करहु विलासा॥
आज्ञा मांगि कृष्णसे आओ। तब आरती विस्तार बनाओ॥
तबही गरुड गये पुनि तहवाँ। श्रीकृष्ण बैठे रहे जहवाँ॥
जाइ गरुड तब विन्ती लाई।

गरुड वचन श्रीकृष्ण प्रति।

तुम प्रभु सदा संत सुख दाई॥
हम यक निर्गुण भेद जो पाया। ताका हम प्रभु विन्ती लाया॥
ओय कबीर सत्यलोकसे आये। तिन मोहि भेद कही समझाये॥
उन अन्तर नहिं ऐसो दिढावा। निज साहब नहिं पृथ्वी आवा॥
नाम कबीर उन आप धराया। यह शब्द उनही भाष सुनाया॥
निर्गुण भेद सबन ते न्यारा। अस उन हम सों कीन्ह पुकारा॥
जो मोहि आज्ञा करो गुसाईं। तौ उनको गुरु करिये जाईं॥
दाया करि मोहि आज्ञा दीजै। सो हम मानि अपन फिर लीजै॥

श्रीकृष्ण वचन।

सुनिके कृष्ण उतर तब दीन्हा। भले गरुड तुम उनको चीन्हा॥
भले गरुड तुम पूछा आयी। दुविधा दुर्मति कपट नशायी॥
जो यह भेद गुप्त करि रखते। हमसों तुमसों अन्तर पड़ते॥
जो तुम हमसों पूछो भाई। उनकर भेद है अगम उपाई॥
वह निर्गुण हम सरगुण भाई। निर्गुण सगुण बहु बीच रहाई॥
हम सर्गुण कई बार औतारा। वह साहिब है सबते न्यारा॥
जाकर पठाये वह यहँ आये। तिनही पुनि हम कहँ निमाये॥
उन आज्ञा जब कीन्ह उचारा। तब हम लीन जोइनि औतारा॥
जो कबीर अहहीं अर्थाई। सोई बचन सत्य है भाई॥

गरुड वचन।

गरुड कहे तब काहे न भाषा। कैसे मोहि छिपाइके राखा॥
निर्गुण भेद प्रभु मोहि छिपायी। सगुण भेद दीन्हा फैलायी॥

श्रीकृष्ण वचन।

सुनो गरुड यक शब्द निदाना। निगुण भेद कोइ विरले जाना॥
देह धरी हम क्रीडा कीन्हा। यहै मानि सब काहू लीन्हा॥
हम गीता महँ सन्धि जनाई। ताको कोइ न चीन्हे भाई॥
निर्भय भक्ति कह्यो परमाना। ताकर भेद काहु नहिं जाना॥
पढि गीता पण्डित बौराये। अर्थ भेद को गम नहिं पाये॥
पढि गीता औरहि समुझावे। आप भरममें जन्म गमावे॥
करै अचार छूतिकै मानै। औरन को हीनहि करि जानै॥
सर्वमयी हमहीं सब माहीं। पण्डित अँधरे समुझत नाहीं॥
हम सबमें सब हमरे माहीं। हमते भिन्न कोइ जानत नाहीं॥
करै सो कौन अचार विचारा। पण्डित भूले धरि हंकारा॥
सर्वमयी है नाम हमारा। पण्डित अर्थ न करै विचारा॥
कहि गीता हम सब समझायी। गीता पढै समुझि नहिं जायी॥
कब हम पूजा नेम बतावा। कब हम जीव घात फरमावा॥
ब्रह्मा विष्णु औ शिव कहवाये। इन तीनों मिलि बाजी लाये॥
तेहि बाजी अटका सब कोई। निर्गुण गमि कैसे के होई॥
बाजी लायके जग भरमाया। निर्गुणकी गति काहु न पाया॥
जो जो कछु हम कहा उचारी। सो काहू नहिं दृष्टि निहारी॥
हम जानहिं सब भेद अवगाहा। और देव नहिं पामहिं थाहा॥
ब्रह्मा विष्णु शिव बाजी लाये। उन काहू नहिं और सुहाये॥
अपस्वारथसोबहुविधिलीन्हा। परमारथ काहू नहिं चीन्हा॥
गीता मथी कही समझायी। सो अर्जुन नहिं जानी भाई॥
चारि वेद मथि गीता कही। सो अर्जुन निज मानी सही॥

श्रवण लगाय गीता उनसुनी । रहनि गहनि एको नहिं गुनी ॥
रहनि गहनि उनहूँ नहिं पायी। अर्थ सुनी सब कान उडायी ॥
सुनिसुनिसोसब जगअरुझावे। सांचा भेद न कोई पावे ॥
उनहुँ अचार विचार न छूटा । ब्रह्मा विनशे यम सो लूटा ॥
श्रवण अवाजसबहिकी लीन्हे। रहनी गहनी कोइ न चीन्हे ॥
अहमेव कीन्हो अधिकारा । ताते जाहि गले सोहि मारा ॥
करै विचार पाखण्ड न छूटे । भर्म विगुर्चन यमकी लूटे ॥
पण्डित बांचि गीता अर्थावे। गीता केर अर्थ नहिं पावे ॥
फिर फिर हमहीं को ठहरावे। पण्डित अंधरा भेद न पावे ॥
सुनहु गरुड यक शब्द हमारा। होय निर्गुण जिव केर उबारा ॥
हम कबीर कै निज करिजाना। उनहीं सकल कीन मण्डाना ॥
उनही सब अस्थान ढढाया। जहँ ले तीर्थ तिन सबहि गढाया॥
जहँ जहँ उन चरन छुआया। सोइ सोइ तीर्थ अस्थान बनाया ॥
आपु जानिके चर्ण जोदीन्हा। यहि बिधि सबको थापन कीन्हा॥
वही मानि सब काहू लीना । आप गुप्त होय काहु न चीना ॥
इन सबही मिलि बाजीलायी। आप आपकी कीन बडाई ॥
जिनकी आज्ञा सब कछुभयऊ। तिनको छिपाये तीनों दयऊ ॥

साखी—कहैं कृष्ण कबीरसों, गुरु तुम करो कबीर ।
हंस लै जइहैं लोक के, खेइ लगैहैं तीर ॥

चौपाई ।

चरण टेकिके गरुड रिगायी। कीन्हो भेंट द्वारका जायी ॥
वृन्दावन होय आज्ञा लीन्हा। दर्शन जाइ द्वारका कीन्हा ॥
चरण टेकि प्रदक्षिण दीन्हा। मस्तक नाइ बन्दगी कीन्हा ॥
समरथ कहो मोहि समझायी। आरति साज मैं लेउँ मँगायी ॥
तब हम उनपै पूछे लीन्हा। कहो कृष्ण आज्ञा कस कीन्हा ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड कह्योअर्थाई । अस्तुति कीन्ह बहुत लौ लाई ॥
एको बात गोय नहिं राखी । कृष्ण बहुत कै अस्तुति भाखी ॥
निर्गुण के हम गम्य न जाना । बहुत भांति उन गम्य बखाना ॥
उनतो निर्गुण गम्य बतावा । ब्रह्मा विष्णु शिव पार न पावा ॥
औ हम उनकहँ दल जो दीन्हा । उन आवे की आज्ञा कीन्हा ॥

सतगुरु बचन ।

तब हम उनको भेद बतावा । एकोत्तर से नरियर फरमावा ॥
बहुत जतन कै मंडप छावा । बहु अनुरागी साज सजावा ॥
जेतक साधु द्वारका आया । सबको गरुड आनि बुलवाया ॥
जेतिक साधू तहाँ रहाये । गरुड सबहिंकों दल पहुँचाये ॥
जहँ ले मुनि हैं सहस अठासी । नाग लोकके नाग जो वासी ॥
वासुकि देव जो आपु रहाये । औरो नाग बहुत चलि आये ॥
आय विष्णु ब्रह्मा दोउ भाई । शीव आय बहु तेज जनाई ॥
सब पर तेज महादेव कीन्हा । तुम सब मिलिके गरुडहिं चीन्हा ॥
तबहिं गरुड पूछा सहिदानी । जोई कृष्ण कहा मोहि बानी ॥

गरुड बचन ।

सुनहू ब्रह्मा विष्णु महेशा । यह मुहि कृष्ण कहा उपदेशा ॥
एति समय बीति जब जायी । तब हम तुम सों कहब बुझायी ॥
जोइ कृष्णसब कहा विवेकी । सो तुम्हरी मति आंखिन देखी ॥

महादेव वचन ।

यह सुनि महादेव रिसियाने । हमरी गति तुम काहु न जाने ॥
हम तीनों हैं त्रिभुवन राई । हमहीं छोडि अवर चित लाई ॥
तू है पंछी मतिका हीना । हमहिं छोडि औरहिं चित दीना ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड कहे समझायी । मति हमारि कोइ विरले पायी ॥
अजर अमर घर पहुँचे सोई । मती हमार लखै जो कोई ॥
अवसर बीति जबै यह जायी । तब महादेव हम कहब बुझायी ॥
सब साधुन की करिये सेवा । यह निज आहि भक्तिको भेवा ॥
सबको गरुड़ जोभोजन दीन्हा । बहुत यतनकै भक्ति सो कीन्हा ॥
करि प्रसाद जब मांड मंडायी । हमसे पूछीविन्ती लायी ॥
तबहि गरुड विन्ती अनुसारी । चलिये समरथ चौक विस्तारी ॥
धर्मदास सुनि चौका कीन्हा । लोक समान पयाना दीन्हा ॥
संत समाज सब गावहिं गाजी । ऐसी भक्ति भक्त भल साजी ॥
बाजे शंख वीन स्वर सोई । झांझन केरी बाजन होई ॥
ताल मृदंग गगन सो बाजै । ऐसी भक्ति भक्त भल छाजे ॥
शब्द स्वरूप तबै हम भयऊ । तुरत जाइ सत्यलोकहि गयऊ ॥
सकलो साज वहां ते आना । बहुत भांतिकी भक्ति जो ठाना ॥
सत्यलोक ते उतरं अंशा । अधम कालका भया विध्वंशा ॥
सब समेत साज जो आये । जगमग ज्योति बरनि नहिंजाये ॥
निर्गुण भक्त हो सुरति संजोई । कौतुक देखि रहे सब कोई ॥
नागलोक को कीना मोही । ऐसी भक्ति न देखी कोही ॥
शेषनाग भये आपु मोहाने । ओरकी बातें काहि बखानें ॥
मोहे ब्रह्मा विष्णु महेशा । नारद मोहै सुकदेव शेशा ॥
गण गँधर्व मोहे सब झारी । निर्गुण भक्ति न परै विचारी ॥
मोहे कृष्ण द्वारका वासी । मोहे सकल सिद्ध चौरासी ॥
यह समाज सो कैसो आई । ताहि देखि सब रहैं झँवाई ॥
ताते रंग उठे ततकारी । मोहि रहे सब सभा विचारी ॥
मोहे विष्णु वैकुण्ठके वासी । मोहे इन्द्र रुद्र लोक कैलासी ॥

मोहे इन्द्र और उरबशी । नौ लख तारा सूरज शशी ॥
यहिविधि कीन्ह भक्ति मनलायी। तनमन सुधि सकलो बिसरायी॥
साखी-तेतीस कोटि देवता,गण गन्धर्व सब झार ॥
सुर असुर सबही थके, लीला नाम अपार ॥

चौपाई ।

धन्य धन्य सब करहिं पुकारा । धन्य गरुड जी ध्यान तुम्हारा॥
धन्य कबीर जिनभक्त उधारा । भक्ति ज्ञान का कीन पसारा ॥
धन्य गरुड सबही अस कीन्हा । ऐसी भक्ति हृदय चित दीन्हा ॥
भक्ति मंडान पहर दोय भयऊ । तहँ हम उठिके आरति कियऊ॥
आरति भइ पुनि बहुतै भांती । बरणि न जाय शोभाकी कांती॥
एकोतरनरियर मालुम कीन्हो। बांटि प्रसाद सबनको दीन्हो ॥
सत्य सत्य सबन मिलि कीन्हा। धन्यगरुड तुम यह मतिलीन्हा॥

गरुड वचन ।

विन्ती करै गरुड चित लायी । सबसे करब हम चर्चा जायी ॥
दया करहु हमपै गुरु देवा। तीनों देव सो कहिहो भेवा ॥
हमतो चरचा करब गुसाईं। हमको दो लखाइ सब ठाईं॥

ज्ञानी वचन ।

अहो गरुड तुम हौ बड ज्ञानी । विद्या देहु सब घरके जानी ॥
घर आयेसे राड न कीजै । क्षमावंत हो विदा सब कीजै॥
विदा देहु सबही सावधाना । तिनके घर तुम करिहो ज्ञाना॥
अस्तुति ठानि चले सब देवा । धन्य कबीर देवनके देवा ॥
साखी-कहैं कबीर धर्मदाससे, यहिविधि आज्ञा लीन ॥
अपने अपने लोक को, सबही प्याना कीन ॥

चौपाई ।

सबको विदा जबहि करि दीना । तबहिं गरुड असकहबे लीना॥

गरुड वचन ।

हमको हुक्म तुम देहु गुसाईं । तुव प्रताप करौं बड़ाई ॥
तुमरी कृपा काल हम जीता । सबही भाँति छुटी मन चीता ॥
तुमरी दया आश सब छूटी । भया निराश तब फन्दा टूटी ॥
अब मनमें मोहीं यक आवै । चरचा करन को मनमें भावै ॥
जो आज्ञा हम तुमरी पावें । फिरि सबहिं सो चर्चा लावें ॥
त्री देवन सों कहूँ बुझायी । तिन कर फँद सब देहुँ तुडायी ॥

ज्ञानी वचन ।

तब हम तिनको बहु समझावा । निर्गुण सगुण सब भेद बतावा ॥
पाई भेद गरुड मनसाने । त्रिदेव सो चरचा मन आनें ॥
तब हम आज्ञा तेही दीना । हमहू बिदा तहां से लीना ॥
साखी—दया लेइ गरुड चले, हृदये धरि गुरु ज्ञान ॥
ब्रह्मपुरी ठाढे भये, चर्चा कर मन ठान ॥

चौपाई ।

हुते द्वारका ज्ञान मंडाना । गरुड वहाँ ते कीन्ह पयाना ॥
जाइ सुमेरु पर बैठे जायी । कीन्हो भेंट ब्रह्म सों आयी ॥
गरुड ब्रह्म लोकहि जब आये । ब्रह्मा आदर कीन्ह बनाके ॥
आदर भाव ब्रह्मा तब कीन्हा । डारि सिंहासन बैठक दीन्हा ॥
जल करजोरि ब्रह्म लइ आये । गरुड के चरण पखारन आये ॥

ब्रह्मा वचन ।

धन्य गरुड यहाँ पगु धारी । अब पूजी सब आश हमारी ॥
तुमतो बाहन कृष्ण के भाई । आज कृष्ण पग धारे आई ॥
जो तुम हम पर दाया कीन्हा । कृष्ण बदल हम तुम कर चिन्हा ॥
आयसु माँगि प्रसाद जो भयऊ । करि प्रसाद वैकुण्ठ में गयऊ ॥
पान फूल जो अगर मँगायउ । इच्छा भोजन तहँवा पायउ ॥

बैठे जाय पुनि गरुड समाजा । उठि तब चर्चा निर्गुण साजा ॥
ब्रह्मा कह तुम कैसे आये । सो मोहि वचन कहो समुझाये ॥
कौन काज यहाँ पगु धारा । कहे ब्रह्मा तुम कृष्णके प्यारा ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड कहे समझायी । तुमही चितावन आयउँ भाई ॥
तुमहिं चितावन हौं पगुधारा । आदि पुरुष वह रहै नियारा ॥
साखी–विनु देखे को जाय यहँ, नाहिं पावे कोइ ठाम ॥
जन्म अनेक भरमत फिरे, मरे विनु गुरुके नाम ॥
आदि पुरुष आगम है, जाको सकल प्रकाश ॥
निर्गुण भेद अपार है, तुम कहँ बांधी आश ॥

चौपाई ।

कोटिन ब्रह्मा गय सिरायी । अविगतकी गति काहु न पायी ॥
कोटिन ब्रह्मा पृथ्वी विलाने । अविगतकी गति काहु न जाने ॥
कोटिन विष्णू गये सिरायी । फिरि फिरि कै पृथ्वीहु विलायी ॥
कोटिन रुद्र देह धरि लीना । अस्थिर होय जगत सो कीन्हा ॥
कोटिन इन्द्रअवतार जो लीन्हा । अविगतिपुरुषकाहू नहींचीन्हा ॥
गण गंधर्व नर कौन चलावैं । सनक सनन्दन पार न पावैं ॥
शेष नाग बहु भांति भुलाने । आदि पुरुषकी खबरि न जाने ॥
सब परिवार जो भूले भाई । अवगति की गति काहु न पाई ॥
भुला देखि जिव दया न आयी । जीव अनेक घात किहु भाई ॥
सब भूले कोई लागु न तीरा । महा अधम सो आहि शरीरा ॥
देह धरी सब भरमें आई । आपन आप सब करै बडाई ॥
अहमेव कैसे खोजेहु जाई । मांताको कहा न कीनेहु भाई ॥

१ जिन २ पुस्तकों में सृष्टिउत्पत्ति प्रकरणका वर्णन आया है उन सबोंमें आद्याकी आज्ञाको न मान कर हठ करके ब्रह्माका निरञ्जन के खोजमें जानेका वर्णन आया है वहाँसे जानना चाहिये और यथार्थ भेद गुरुसे ।

कीन्हो खोज तुम आपु गुमाना। नहिं पाये तब रहे लजाना ॥
खोजकीन्हो जब अन्त न पावा। तब तुम आप आप ठहरावा ॥
आपु हढाय थापना कीन्हा। सोई अहम् निर्गुग नहिंचीन्हा॥
तुमरे भूले जगत भुलाना। आदिपुरुष को मर्म न जाना ॥
यहि विधि जग सब रहत भुलायी।टीका मूल काहु नहिं पायी ॥
तेतीस कोटी देव भुलाये। यहि भूले कोइ गम्य न पाये ॥
साखी–मूले गम्य न पाइया, भूले मूढ गँवार ॥
टीका भूल न जानई, अरुझि रहा संसार ॥

चौपाई।

तुम बाजीगर बाजी लाये। तुमतो सब दुनियाँ भरमाये ॥

ब्रह्मा वचन।

सुनि ब्रह्मा तबहीं रिसियाने। हमते दूजा केहि को जाने ॥

गरुड वचन।

सुनु ब्रह्मा यक बचन हमारा। तुम अस ब्रह्मा कोटि हजारा ॥
कोटिन ब्रह्मा ठाढे द्वारा। कोटिन वेद सो करहिं उचारा ॥
खोज करन ब्रह्मा तुम गयऊ। कहुँ पिता के अन्त न पयऊ ॥
झूठ कहे मातासो जायी। ताते ब्रह्म शाप तुम पायी ॥
माता ते तुम भये लबारा। आय जीव में सकल सँसारा ॥
सबकी प्रतिमा थीर न आयी। आपु समेत सकलो भरमायी ॥
जो कोइ कहे भूलकी वानी। कोटिन जन्म नरककी खानी ॥
यह संसार रहट की घरिया। कइक बार राजा अवतरिया ॥
कइक बार नरक में परई। कइक बार ब्राह्मण औतरई ॥
यहि विधि जीव आवे जायी। भरमि भरमि चौरासी पायी ॥
कोटिनबार अस्थावर जानी। कोटिन बार पिंडज उत्पानी ॥
कोटिन जन्म अँडजअवतारा। यहि विधि भरमहिं जीवविचारा॥
यहिविधिभरमें जीवविचारा। बिनु सतगुरु नहिं होय उबारा ॥

साखी-कहे गरुड समझाइके, सुनहु ब्रह्म यह बात ॥
अविगत पुरुष सु और है, जाके माय न तात ॥

ब्रह्मा वचन-चौपाई।

सुनि ब्रह्मा तब पूछे बानी। कैसे अविगति की गतिजानी ॥
कौनी युक्ति साच के मानी। साहिबकी गति कैसे जानी ॥

गरुड वचन।

गरुड़ कहै तुम आपही ज्ञाना। जहाँ गर्व तहाँ पुरुष छिपाना ॥
गर्ब गुमान में जो है पूरा। रहै सदा सो धूर अधूरा ॥
साखी-मानुषदेह अपराधि है, देह धरे अभिमान ॥
ताते सबैं विगुचैं, भक्ति मर्म नहिं जान ॥

चौपाई।

भक्तिजो आदि अंतसे आयी। जाते सकल माड निर्मायी ॥
ताकर मर्म जो जाने नायी। ताते काल फांस निर्मायी ॥
साखी-लोक वेद जाने नहीं, करै भक्ति अभिमान ॥
ताते सबे विगुरचे, भक्ति करन का जान ॥
ध्वजा जो फरके शून्यमें, बाजे अनहद तूर ॥
तकिया है मैदान में, पहुंचगा कोइ शूर ॥

ब्रह्मा वचन-चौपाई।

ब्रह्मा कहै गरुड सुनु भाई। अपने मुख तुम करहु बडाई ॥
इतना ब्रह्मा किया बिचारा। देवविमान तुरत भये ठाढा ॥
कहे ब्रह्मा तुम जाहु बिमाना। लाओ विष्णु बुलाइ सयाना ॥
चला विमान विष्णु पै गयऊ। तबहि विष्णुअस पूछनलयऊ ॥
कहो विमान कहाँ पगु धारे। सत्य सत्य कहो बचन सम्हारे ॥

विमान वचन।

गरुड भक्त यक आया देवा। सो नहिं माने तुम्हरी सेवा ॥

सुनत विष्णु विमान चढाये । चढि विमान ब्रह्मलोकहि आये ॥
विष्णुपुरी से विष्णु जब आये । बैठ जाय ब्रह्माके ठाये ॥

विष्णु वचन ।

केहि काज पर मोहि बुलायी । सो मोहि भेद कहो समझायी ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा वचन कहै अर्थावै । कहै गरुड हम कहि चेतावै ॥
हमको मनुष देह करि जानै । आदि पुरुष औरे को माने ॥
भले विष्णु तुम आये भाई । अब शिवको तुम लेहु बुलाई ॥
गढ कैलास शिवका अस्थाना। तहँको अब जाहु विमाना ॥
सब देवनको आनु बुलायी । सुनहीं चर्चा गरुड की आयी ॥
महा विमान तुरत चलि गयऊ । गढ कैलास पर ठाढे भयऊ ॥
शिवशंकर को माथ नवायी । पाछे ब्रह्माका वचन सुनायी ॥
ब्रह्मा गरुड जहँ झगर पसारा । तेहि कारण तुम सबे हँकारा ॥
ब्रह्मा विष्णु बैठ एक ठाई । कीन्ही चर्चा मंड मँडाई ॥
गरुड सबहि का करै उच्छेदा । सो मैं तुमहि बतायो भेदा ॥
बाजे डमरू हनै निशाना । चले रुद्र तब साजि बिमाना ॥
तुरत चले नहिं लाये बारी । चले रुद्र आये पशुधारी ॥
ब्रह्माको जहँ भयउ उछेदा । बैठे जहँ करे बहु भेदा ॥
इन्द्र लोक सो इन्द्र बुलाये । जेहि सग देव सबे चलि आये ॥
सोसब चलि ब्रह्मा पहँ आये । वासुकि देव जो आप रहाये ॥
आवत उनके नाग बहु आये । बहुतै नागिन आयी बहुभाये ॥
सुरनर मुनिसब आनिबुलायी । जो जस आसन तस बैठाई ॥
ब्रह्मा विष्णु बैठे यक ठावा । गरुड तहाँ पुनि ज्ञान सुनावा ॥

गरुड बचन ।

अविगतिकीगतिआदिनिनारा । सब भूले कोइ पाउ न पारा ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा कहै विष्णु सों बाता। गरुडको ज्ञान सुनो बिख्याता ॥
हम तीनों अवरे नहिं कोई। हमरे परे सुनावै सोई ॥
ब्रह्मा कहै विष्णु सों बाता। हमको कहत है परलय घाता ॥
हमतो तीन लोकको कीन्हा। हमको सकल देवता चीन्हा ॥

गरुड वचन ।

तबहि गरुड यक बचन उचारा। जग कर्ता तुम सृष्टि सवाँरा ॥
वह साहब सबही ते न्यारा। कस नहिं ताकर करो विचारा ॥
जिन साहब तुम्हे निर्मायी। तुम कस ताको नाम छिपायी ॥
विष्णु रहत हैं तुम्हरे पासा। तिनहूंको पुनि काल गरासा ॥
क्रोधवंत ब्रह्मा तब भयऊ। अचरज बात गरुड जो कहेऊ ॥
जाकी तैं पुनि सेवा करई। सो तो हमरे त्रास महँ डरई ॥
सुर नर मुनि सब काहू चीन्हा। सुनु पंछी तैं मतिका हीना ॥
लोक वेद सब हम कहँ जाने। ना जानूं कस आपन चित आने ॥

गरुड वचन ।

सुनु ब्रह्मा तैं गर्ब भुलासी। तोहि अस ब्रह्मा कोटि मरासी ॥
हमतो ब्रह्मा बहुत जो देखा। जो पूछहु तो काढों लेखा ॥
काढों विष्णु कोटि सै चारी। महादेव जाके भंडारी ॥
मैं तो भक्त कबीरका चेला। युगन युगन जिन कीन्हो मेला ॥
हमसों कह्यो कबीर बुझायी। ताते आय कह्यो गोहरायी ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा कोपि उठे तब भाई। विष्णु महादेव सुनहूँ आई ॥

विष्णु वचन ।

आये दूनो जन ब्रह्मा ठाई। विष्णु कहे कस मता दिढाई ॥
काह आज जिव बहुत उदासा। कीन्हो क्रोध गरुड के पासा ॥
कहो वचन मुख होय प्रकाशा। हम अजान हैं तोम्हरे आशा ॥

ब्रह्मा वचन ।

ब्रह्मा कहै सुनो हो भाई । अविगति की गति गरुड सुनाई ॥
हमहीं तीन अवर नहिं कोई । चौथे एक निरंजन सोई ॥
ताको गरुड न माने भाई । ताते मोहि क्रोध भौ आई ॥
तिहि कारण हम तुम्हे बुलावा । गरुड ज्ञान हमहीं समझावा ॥

विष्णु वचन ।

विष्णु कहैं सुनो गरुड विचारी । आदि अंत कोइ अगम है भारी ॥
एक ध्यान हमहूं नहिं कीना । अविगति बात हमहूं नहिं चीना ॥
अहमेव मेटी सुरति लगाया । अविगति ध्यान तबहुँ नहिं पाया ॥
ध्यान मध्य हम देखा जाही । ब्रह्मा विष्णु महादेव नाहीं ॥
साखी-विष्णु नहीं ब्रह्मा नहीं, महादेव नहिं कोय ॥
ओम्‌ओंकार तहवाँ नहीं, निरखि देखा हम सोय ॥

ब्रह्मावचन-चौपाई ।

तब ब्रह्मा अस वचन उचारा । यह है बडा काल वटपारा ॥

विष्णुवचन ।

सुनु ब्रह्मा अविगती कहानी । विना तत्त्व मैं निरखा बानी ॥
ताकी का कहिये अब बाता । अगम अपार कहूँ विख्याता ॥
साखी-निःकामी निध्यानि सोइ, निष्प्रेमी निर्वान ॥
कहै विष्णु ब्रह्मा सुनो, अविगति यहि बिधि जान ॥

चौपाई ।

ब्रह्मासों कहै विष्णु बखानी । है कोइ आदि पुरुष निर्वानी ॥
दुर्वासा संग रहे जब भाई । अविगति की गति तब हम पाई ॥
तबका बोल हम कीन्हपरमाना । ताते हम जानहिं निरबाना ॥
दुरवासा गुरुभक्ति दृढाया । तबते हमहु परम पद पाया ॥
साखी-ब्रह्मा हमकहँ जानहूँ, और न कोई सांच ॥
दृढा ज्ञान नहिं आवई, ताते काया कांच ॥

ब्रह्मा वचन।

ब्रह्मा कहै सुनो विष्णु विचारी। हमही रचा पुरुष औ नारी॥
हमते और कौन है भाई। सो मोहि भेद कहौ समझाई॥
हमतो सर्गुण सकल पसारा। हमतो अगम निगम विस्तारा॥
हमतो रचा पवन औ पानी। हम कहँ देव व्यास बखानी॥
हम चौरासी नाव जो कीन्हा। हम निर्गुण सरगुन चीन्हा॥
इतनी कथा कहि ब्रह्म सुनाई। तबहूँ गरुड न मानैं भाई॥

गरुड वचन।

कहै गरुड सुनो ब्रह्म कुमारा। तुम कहँ रची सृष्टि करतारा॥
सबको रची सबै जिन कीना। वह तो पुरुष सबन ते भीना॥
वह तो पृथ्वी पाँव न दीन्हा। शब्दहि ते सकलो जग कीन्हा॥
जो आप रचना करि जाना। तो हमसे हठि भाषहु ज्ञाना॥
जो तुम रचा पवन औ पानी। पृथ्वी अकाश तुमहिं जो ठानी॥
रचा तुम्हार तब जानहिं भाई। अब रचहू तुम फिरि विनशाई॥
जो तुम्हार है सकल बनाई। फिरि के परलय करहु तुम भाई॥
तब हम जानहिं कीन तोहरा। यह मटहु सकलो बिस्तारा॥
अपने हाथ रचै जो कोई। फिरि कै मेटि सकै पुनि सोई॥
तब ब्रह्मा सुनि रहे लजाई। सम्मुख उत्तर कह्यो न जाई॥

महादेव वचन।

कहे महादेव सुनो रे भाई। अचरज बात कही नहिं जाई॥
सुनु ब्रह्मा गरुड जो कहई। ताकर भेद कोइ विरला लहई॥
दश औतार विष्णु जो लियऊ। काया काल ग्रास जो कियऊ॥
तबही कृष्ण भेद यक कीन्हा। ताको ब्रह्मा तुम नाहिं चीन्हा॥
गोपी ग्वाल सबै हरि लाये। तब जो कृष्ण सब दीन मेराये॥
इतनी बात ब्रह्मा नहिं जानो। अविगतिकी गति कैसे पहिचानो॥

साखी कौन सरूपी कृष्ण है, कौन धरे अनुमानु ॥
देह धरे नहिं चीन्हहू, निर्गुण कैसे जानु ॥

चौपाई ।

निरगुण को गुण है बड भारी । जिन उत्पन्न कियो सब सारी ॥
वह तो पुरुष मूल है माथा । गति प्रतीति ताही के साथा ॥
नहीं महातम पुरुष की पूजा । जपतप संयम नाम बिनु दूजा ॥
वार पार नाम नर सेई । अजर नामको सुमिरन देई ॥
बारहिं बार नाम लौ लावे । अजर अमर होय लोक सिधावे॥
नामसिखापन बदन सो खोले । विना नाम विनु महातम डोले ॥
सतगुरु बिना मर्म नहि जाने । हमें तुम्हे सब जगत बखाने ॥

ब्रह्मा वचन ।

सुनो महादेव साँच बखाना । निर्गुणके गुण हमहूँ नहिं जाना ॥
अविगतिकीगति हम नाजानी । योगी जंगम सेवि हम जानी ॥
सुर नर मुनि सब हमको ध्यावें । हम उपजावें हमही विनशावें ॥
साखी- मैं उपजावों मैं विनशावों, मैं खरचों मैं खाऊँ ॥
तीन लोक पैदा करों, मोर ब्रह्म है नाउँ ॥

गरुड वचन चौपाई ।

ममताते नर नरकै जायी । ताते बहुरि बहुरि जन्मायी ॥
तुहि अब ब्रह्मा बहुत बिचारा । ताते काया बिनसे सब सारा ॥
तू ब्रह्मा अस जो धरे हँकारा । तेहिते काल भया वटपारा ॥
सुनु ब्रह्मा अविगति की बाता । एकै पुरुष एक है माता ॥
सुनहू सब सभा विचारो । यक मैं निरखिकहौं निरुआरो ॥
वहि साहबकी खबरि न पावा । तुव अस ब्रह्मा बहुत उपावा ॥
ब्रह्मा हमनिरखि परखिके जानी । साहब शब्द लेहु पहिचानी ॥

ब्रह्मा शिवकी बातकी व्यंगसे हंसी करते हैं।

साखी—कहो ब्रह्मा का भूलहू, कहौं तोहि समुझाय ॥
मोर मोर के धावहू, ममता अमल चलाय ॥

चौपाई ।

ममिता ते दशो अवतारा । ममिता महादेव घरु छारा ॥
ममिता लोमश योग जो कीन्हा । आयु बढी भगती नहिं चीन्हा ॥
ममिता ते आपुहिं जो रहेऊ । ममिताते तीनलोक बहि गयऊ
ममिता तेज निरञ्जन कियऊ । ममिता ते पुरुष दरश न पयऊ ॥
तुम ब्रह्मा कीन्हे अभिमाना । तेहिते साहब अछय छिपाना ॥

साखी—ब्रह्मा गर्ब तुम कीनिया, सुनि राखू यक बात ॥
जो साहब अभि अंतरे, सोई सदा संघात ॥
तुम अज्ञानी नहिं जानहू, सुनु ब्रह्मा यक बात ॥
अविगति अगम अपार है, समरथ सदा सँघात ॥

विष्णु वचन चौपाई ।

विष्णु कहैं सुनो हो भाई । चलहू तुरत ज्योति पहँ जाई ॥
ज्योति कहै सो सुनिये भाई । सब मिलि चलहु सांच कै आई ॥
आंखिन देखी पूछि न जाई । पाय अभिमान चीन्हे नहिं पाई
अभिमान मता सब दूर करि दीजे । सांच बस्तुको धारण कीजे ॥
अभिमान समेत,चीन्हे नाहिं कोई । देह धरी सब गये बिगोई ॥
आपा थापि सुधि बुधि खोई । आपा छोडे पावे सोई ॥

महादेव वचन ।

तब महादेव कहैं विचारी । अहो विष्णु पूछहु महतारी ॥
जो वह कहैं सो हम तुम मानैं । औरी बात नाहिं हम जानैं ॥
ब्रह्मा विष्णु से हुई यह बाता । तुम बडे कि बडो है माता ॥
सब मिलि तब कीन्हे पयाना । जाइ माता ढिग कीन्ह वयाना ॥
माता बोलहु सतके भाऊ । नहिं अरुझावहु भाषि सुनाऊ ॥

तीनो देव कहैं सुनु माता । और कौनपुरुषआदिविधाता ॥
हम तीनों कि और है कोई । यह निज भेद बतावहु सोई ॥

माता वचन ।

तब माता बोले हितकारी । कस न ब्रह्मा करहु विचारी ॥
जब तुम हते हमारे पासा । तब तुम कीन पिता की आसा ॥
तबकी बात विसरि तुम गयऊ । पुरुष ते विमुख तुम भयऊ ॥
पुनि माता यक वचन अनुसारी । महादेव हो कृतम भिकारी ॥
अमर वचन जो हमहीं भाखा । युग चारों देह अमर राखा ॥
सोई वचन भूलिजो गयऊ । मातुपिता सों अंतर लयऊ ॥
पुनि माता गरुडसे बोली । अमृत वचन रसाल अतिखोली
कहे माता सुनु गरुड सुजाना । तुम तो बचन कही परमाना ॥

गरुड वचन ।

गरुड तब पूछे ज्योतिसों बानी । कैसे तुम यह सिरजा खानी ॥

माया वचन ।

तब उन कहा पुरुष सों बानी । पावक नीर पवन वैसानी ॥
जलरंग अंश सो साथहिं रहई । ताकी खबरि कोई नहिं लहई ॥
प्रथम अंश जलरंग जो कीन्हा । तब जल सिन्धु नाम कहि दीन्हा

साखी—ब्रह्मा विष्णु कोई नहीं, महादेव भी नाहिं ॥
पुरुष एक तब अविगति, अगम अगोचर माहिं ॥

ब्रह्मा वचन चौपाई ।

कहे ब्रह्मा हम आपु प्रकाशा । हम पुहमी नौखण्ड निवासा ॥
हम हैं नीर हमहिं हैं पवना । हमहीं रचा सकल सब भवना ॥
हमहीं पांच तत्त्व सब कीन्हा । हमहीं आप सृष्टि रचि लीन्हा ॥
हमहीं सकल सृष्टि विस्तारा । हम कर्ता हैं सकल पसारा ॥
हमहीं चन्द्र सूर दिन राती । हमहीं कीन्ह किरतम उत्पाती ॥
हमहीं आदि अंत मधि तारा । हमहीं अंध कूप उजियारा ॥

हमहीं ब्रह्मा विष्णु महेशा । हमहीं नारद शुकदेव शेश ॥
हमहीं कंस कृष्ण बलि बावन । हमहीं रघुपति हमहीं रावन॥
हमहीं हैं मच्छ कच्छ बराहा । हमहीं भादों फागुन माहा ॥
हमहीं दशौ भये अवतारा । तीरथ बरत देहरा धारा ॥
हमहीं हंसा समुद्र तरंगा । हमहीं सरस्वति यमुना गंगा॥
हमहीं योग युक्ति व्रत पूजा । हमहीं छाँडि देव नहिं दूजा ॥
हमहीं पढना गुनना लीखा । हमहीं पाप पुण्य गुरु शीखा ॥
हमहीं विद्या वेद पुराना । हमहीं कीन कितेक कुराना ॥
हमहीं आवें हमहीं जावें । हमहीं आदि अन्त की छावें ॥
तीनलोक हमहीं बिस्तारा । सकल निबल देही हम धारा ॥
साखी-तीन लोक में रमिरहे, सबही मोही मान ॥
कहु माता समुझायके, किरतम कैसे जान ॥

माता वचन चौपाई ।

तब माता अस बोली वानी । तूतो ब्रह्मा चतुर सुजानी ॥
हमसे भयी उत्पत्ति तुम्हारी । तुमही पुत्र हमही महतारी ॥
पिता केर खोज जो कीन्हा । तब हम तुमको हुकुम न दीन्हा॥
बरबस के तुम खोजेउ जायी । तब हम पिता की खोज बतायी॥
तब हम तुमसो बोली वानी । दर्शन ते बेमुख तुम्हे जानी ॥
तब तुम पैज बाँधि कै चलेऊ । पिता के दरस नहीं तब भयऊ ॥
जो तुम कीन्हे सकल बखाना । ताकर मोसों कहो विधाना ॥
जो आपुहिं आप तुम रहऊ । कवनके खोज करन तुम गयऊ ॥
काहे को बोलहु अनरीती । तुम लबार सों कीन्ही प्रीती ॥
बरबस खोज पिताके गयऊ । खोज नपायअमरख तबभयऊ ॥
तब हमतो बोले झूठे लबारा । तैसहिं सब चलही संसारा ॥
एक वार लबारी करेऊ । तब हम तो कहँ शाप सो दयऊ॥
अब बोलहु तुम बचन सम्हारी । काहे ब्रह्मा बोलु लबारी ॥

साखी– भाषहु वचन संभारिकै, जनि बोलहु अज्ञान ॥
परमपुरुष एक अगमहै, ताकर करहू ध्यान॥

चौपाई।

हम तो सत्य वचन चित धरेऊ। हम तुम सत्य पुरुष ते भयऊ ॥
ममता तेज बहुत तुम कीन्हा ।आदि अन्त को नाहिन चीन्हा॥
माता वचन कह्यो सब झारी। तब ब्रह्मा मन आयी हारी ॥

गरुड बचन।

सुनु ब्रह्मा तुम कौन मति ठानी। माता कहै सो कहा न मानी॥
जो नहीं यह वचन परमानो ।ज्योतिकहै सो सब मिलिमानो॥
सुनि ब्रह्मा को गर्व परहारा ।एक पुरुष जिय कियो है चारा॥
परम पुरुष तेहि कीन प्रकाशा। जिनकी जगत लगावे आशा ॥
चौसठ युग वही प्रकासा। सत्तर युग है वाके पासा ॥
सहस्र युग गये शून्य वे शून्ने। नहिं तहँ पाप नहीं तहँ पुन्ने ॥
तुम सम ब्रह्मा केतिक गयऊ। हम तब सब कर भेद लयऊ ॥
साखी–सुनु ब्रह्मा का जानई, । तुम तो करम के खोट॥
तेहिते हाल विनसिहो, जनी कहावहु छोट॥
सुनु ब्रह्म कहँ भूलिया, जनि करहू तुम रोख ॥
जन्म जन्म चौरासिया,यहिविधि पावो धोख॥
कहै गरुड समुझायके, जनि भरमहु अभिमान ॥
साहिब एक अगम्यहै, ताकर करहु पिछान ॥

चौपाई ।

टीका मूल एक हम देखा । तहाँ है निज शब्द विवेखा ॥

विष्णु बचन ।

[illegible] महादेव सुनहू भाई । सब पर देव निरञ्जन राई ॥
एक निरञ्जर और न कोऊ । तेहिते अपर और नहिं होऊ ॥
तेहिते और नहीं कोइ पारा । सो तो सकल भुवन सरदारा ॥

वही सकल भुवनका स्वामी। वही परम ब्रह्म अन्तरयामी ॥
उनही नारी पुरुष बनावा। सकल सृष्टि उनही सिरजावा ॥
लख चौरासी उनहि सँवारा। उनही गोरख नाम धरावा ॥
उनही छलिबलि पताल पठावा। काल रूप धरि जगमें आवा ॥
उनही यह सब खेल खिलायी। उनही सकल सृष्टि उपजायी ॥
साखी-कहे विष्णु गरुड सुनु, कहे सुने का होय ॥
एक निरञ्जन आपु है; दूजा और न कोय ॥
सात द्वीप नौखण्डमें, एक निरञ्जन होय ॥
और कौन सो देखिये, ताको कहिये सोय ॥

गरुडबचन-चौपाई।

मैल मलीन सकल संसारा। सो निर्मल जाके अंत न पारा ॥
मैले ब्रह्मा मैले इन्द्र। रवि मैला मैले शशि चन्द्र ॥
मैले सनक सनन्दन देवा। मैले यह जग लहै न भेवा ॥
मैले शिव ब्रह्मादिक देखा। मैले लोक ब्रह्माण्ड विशेखा ॥
निशि वासर मैले दिन तीसा। मैले काल मैले अवनीसा ॥
मैले जोत मैले तन हेता। मैली काया मैल समेता ॥
मैले निरंजन नर नहिं जाना। उन यह सृष्टि कीन्ह पिसमाना ॥
निर्मल नाम एक है श्वेता। निर्मल सो जो नामहिं लेता ॥
कहै गरुड ते जन परमाना। जो निर्मल निज नामहिं जाना ॥
साखी-निरंकार ओंकार है, पार ब्रह्म है सोय ॥
एक नाम चीन्हे विना, भटकि मुवा सब कोय ॥
साहब इनहि बनाइके; आपुइ रहै निनार ॥
सो निज नाम जानें विना, कैसे उतरे पार ॥

चौपाई।

कहत सुनत सबही सुधि पायी। कहत सुनत सब तीर्थहिं जाई ॥
कहत सुनत ज्ञान बहु करई। दम्भ अभिमान बहुत सो धरई ॥

कहत सुनत नर तीर्थहिं जायी । भरमत भरमत गल फांसलगायी ॥
कहत सुनत सब सुनैं पुराना । कहत सुनत सब देत है दाना ॥
कहत सुनत सब खेती करई । कहत सुनत नर माया धरई ॥
कहत सुनत जो चुगली करई । होय चण्डाल नरक महँ परई ॥
कहत सुनत नर कूप खुदावे । कहत सुनत उद्यम मन लावे ॥
कहत सुनत स्वाद मन धरई । कहत सुनत नर गढहे परई ॥
कहत सुनत नर माया जोरी । सौ सहस्र औ लक्ष करोरी ॥
कहत सुनत गुरु शिष्य जो करई । आप अजान भरम में परई ॥
कहत सुनत भक्ति जो ठानी । कहत सुनत पायन पर आनी ॥
कहत सुनत सागर तलाव बनावे । कहत सुनत पाप पुन्य कमावे ॥
साखी-कहत सुनत सब गये हैं, कहत सुनत सब जाय ॥
कहत सुनत करनी करे; तब प्रभु परसे आय ॥

महादेव वचन-चौपाई ।

क्रोधवंत महादेव तब भयऊ । हमहू को उठाय तुम धरेऊ ॥
महादेव बोले बात विचारी । हमको जान्यो कितम भिखारी
हमको मनुष देह करि जाना । भूली बात करे बखाना ॥
महादेव अस युक्ति बतायी । कहोतो सकलो देऊँ दिखायी ॥
कहो अकाशको बन्द बताऊँ । सात द्वीप नौ खण्ड दिखाऊँ ॥
अचरज एक बात उन भाखी । कहोतो आनि दिखाओं साखी ॥
कहो तो गरुडही मारि कै डारों । कहो तो योगजीतहिं मारों ॥
कहो तो काल रूप हम धरें । कहो तो पल महँ मारि सँघारें ॥
कहो तो याही देऊँ भुलायी । बहुरि न हमसौं बौराई ॥
यह सो बक वाद विचारा । हमसों बाजी करै अपारा ॥
यह तो आदि अंतसे आये । तेहिते ब्रह्मा विष्णु कहाये ॥
हमहीं सिरजें पालैं मारैं । दानव देवी मारि उखारें ॥

ब्रह्मा तो है जेठा भाई। वेद वाक्य सब कहै बनायी॥
कैसे ब्रह्मा शीव उठावे। कैसे विष्णुहि हीन दिखावे॥
साखी–अगमनिगम सब जानई, कहै मुक्तिका नीव॥
विष्णु काया दिढावई, योग दिढावे शीव॥

गरुड वचन।

सुनो महादेव मतिके हीना। तुम नहिं जानो पुरुष प्रवीना॥
तुम तो आपहि गर्व भुलाये। तुम सेवक साहब होय आये॥
तुमकिंचित हो जीव विचारे। तुम्हरे कहे होय का पारे॥
तुम्हरा किया कछू ना होई। आप पुरुष उपजावे सोई॥
आप सुरति प्रभु कीन उचारा। तब तहँ चौदह भुवन सँवारा॥
सेवा बदले पाय तिहुँलोका। जीवन कारन लाये धोका॥
धोका लाय ठग्यो संसारा। तीन लोकमें फन्द पसारा॥
साखी ब्रह्मा विष्णु महेश्वर, सुनहूँ सत्य विचार॥
वह तो पुरुष अखण्ड है, अपरमपार अधार॥
तुम तीनो मिलि आपा थापी। आपा थापी भये महा पापी॥

सतगुरु वचन।

सुनु धर्मनि औरो यक बाता। उहँ तो सबै ज्ञानमहँ राता॥
जब देख्यो सब आपा थापे। करत बडाई नहिं तनिको धापे॥
तब अस युक्ति किया बनाई। जाते होय परीक्षा भाई॥
बंग देश बालक यक रहेऊ। जाति ब्राह्मण सबै तेहिं पयऊ॥
ताकर आयू सबै खुटानी। मृत्यु आयी निकट तुलानी॥
ताको ज्ञान अस हम दीना। मृत्यु निकट भयी आयु छीना॥
काल वचन उपाय विचारो। ब्रह्मादिकके निकट पगधारो॥
लाय गरुड तुरत पहुँचाये। ब्रह्मा विष्णु शिवहि बताये॥

गरुड वचन।

कहै गरुड सुनो यक बानी। यहि बालककी मृत्यु नियरानी॥
याको कोई नाहि सहायी। याते आयो तुव शरणायी॥
यहि बालक को कौन जो राखे। सत्य वचन हम मुखते भाखे॥
तुम तीनों त्रिभुवनके देवा। बालक ठान्यो तुम्हरी सेवा॥

ब्रह्मा वचन।

तब ब्रह्मा बालक सों बोले। जानि प्रभुता आपन मुख खोले॥
कहे ब्रह्मा वचन हितकारी। को तेरा बाप को है महतारी॥
कहु बालक कहांते आया। किन तुमको यहां पठाया॥
कौन साहब दीन्हा औतारा। कौन तुझको मारनहारा॥

बालक वचन।

तब बालक बोले अनुसारी। को है पिता को है महतारी॥
ना जानूँ किन दिया औतारा। ना जानूँ को मारनहारा॥
हम पूछे कोई राखहु भाई। तेहि कारन आये तुम्ह ठाई॥
साखी—तीन लोक के ठाकुर तुम, ब्रह्मा विष्णु महेश॥
मैं तो कछु जानो नहीं, काहि कहौं संदेश॥

महादेव वचन।

सुनु बालक मैं कहूँ बुझायी। मृत्यु तुम्हारी नियरे आयी॥
इहां कौन है राखन हारा। धर्मराय तुव कीन पुकारा॥
केहि बिधि यहां कैसे रहिहो। कौन शब्द पुरुष पद पैहो॥
कैसे के भवसागर तरिहो। कौन भक्ति हृदय चित धरिहो॥
सोई भेद कहौ समुझायी। जाते तुम्हरा दुःख नशायी॥

हंसा (बालक) वचन।

हमतो तुम्हरी शरणे आये। जस जानो तस करो उपाये॥
हमरी तो अब मृत्यु तुलानी। हमका जानें शब्द औ बानी॥

अब करु वेगि सम्भारी मेरी। अब जनि करहु देव तुम देरी॥
मृत्यु हमारी तुली अब आयी। तुम अब हमको लेहु बचायी॥
जो तुमसे नहिं बाचूँ भाई। मिथ्या तुम का करहु बडाई॥
तुम सेवक साहब का होऊ। दूसर साहब है निज कोऊ॥

विष्णु वचन।

विष्णु कहे सुनु बालक भाई। अब तोको यहां कौन छुडाई॥
कैसे को अब राखैं भाई। कैसे को तुव काल छुडाई॥
कैसेके तोर काल छुडाओं। कैसे आवा गमन मिटाओं॥
साखी– काल बडा प्रबल अहै, मो पै कछू ना होय॥
वासे नहिं कोइ बाचई, ब्रह्मा विष्णु वियोग॥

चौपाई।

सब मिलि रहे काल के साथा। काल फिरत है सब के माथा॥
काल की गति हम नहिं जानें। धोखे यम के हाथ विकाने॥
साखी–काल कि गति जाने नहीं, ब्रह्मा विष्णु महेश॥
ऋषी मुनी सब कम्पहीं, कम्पे शेष सुरेश॥

चौपाई।

केतिक देह हमही जो धरिया। फिरिफिरि कालके फन्दे परिया॥
देह धरि धरि जगमें आये। यहि पृथ्वी में नाम धराये॥
साखी–कालसों कोइ नबाचै, सुनुबालक चित लाय॥
कैसे कै मैं राखिहौं, मो सों राखि न जाय॥

चौपाई।

देह धरी नहिं बचिहो भाई। सबको काल धरी धरि खाई॥
काल बडो है अति बलवंता। देवी देवा खाय अनन्ता॥
सप्त द्वीप जो हैं नौ खण्डा। काल बली सबहिन को डण्डा॥
तीन लोक पै करे रजधानी। हमहूँ ताकी सेवा मानी॥

विष्णु कहे ब्रह्मा सों बाता । यह बालक कीन्हा उत्पाता ॥
यह वृत्तान्त तुम जानो भाई । तुम बालक को लेहु बचाई ॥
ब्रह्मा तब सुनि रहे लजाई । हमसे बालक राखि न जायी ॥

गरुड वचन ।

तबही गरुड जो बोले बानी । बालक जिये तब तोहि जानी ॥
आपा रोपि रहे ठहराई । किया तुम्हार न होवे भाई ॥
जो तुम आज बालक को राखो । तौ तुव बचन सत्य कै भाखो ॥
कहै गरुड सो तरक लगायी । बालक काहे न राखु बचाई ॥
ऐसी बिधि फिरिफिरि अवतरहू । पुनि अपनी बुधि भरमत रहहु ॥
सबको ब्रह्मा देउ उपदेशा । अपने गर्बका न जानहु लेशा ॥
हमजानी तुमरी मति भाई । अब तुम थापि रहहु ठहराई ॥
गरुड कहै अस ज्ञान विचारी । ऐसी भूल परी संसारी ॥

सतगुरु वचन ।

धर्मदास तुम सुनो विचारी । गरुड याबिधि दीन्ह प्रचारी ॥
तब तीनो मन में कीन विचारा । करि विचार ज्योति कहँ उरंधारा ॥
तीनो मिलिके पूछैं माता । जो वह कहै सुनो विधाता ॥
आप आपमें तीनो ठानी । अंत काल गमि पूछन आनी ॥

त्रिदेव वचन माता प्रात ।

माता ते पूछैं चितलाई । सत्य वचन काहो तुम माई ॥
तुमरा चरित्र हमहींनहिं जाना । आप आप मिलि कीन बखाना ॥

माता वचन ।

तबहीं ज्योति उचारी बानी । अहै काल सब पर पर धानी ॥
कोन है बालक राखन हारा । आप पुरुष जो कीन हँकारा ॥
जाइके तुरत देहु पहुँचायी । जहवाँ का जीव तहँ चलिजायी ॥

सतगुरु वचन ।

तबतो ब्रह्मा ध्यान लगावा । तुरतहि गये ब्रह्मके ठावा ॥
ब्रह्मा वचन तब उठा परमाना । आदि पुरुषका मर्म न जाना ॥
तुम ब्रह्मा गर्व बहु भाखा । ताते जोति छिपाय के राखा ॥
माता ते नहिं अन्तर करते । फिरि फिरि देह सुकाहे धरते ॥
ब्रह्मा तबै रहे अरथाई । सन्मुख बात कही नहिं जाई ॥

गरुड वचन ।

तीनो देव विवस जब भयऊ । देखि गरुड तब बोलन लयऊ ॥
अब जनि भूलो तीनों देवा । आदि पुरुष की करो तुम सेवा ॥

सतगुरु वचन ।

तीनो देवमिलिमंत्रयककीना । बालक को बिदा कै दीना ॥

तीनोंदेव वचन ।

सुनु बालक तेरीमृत्यु तुलायी । कौनी शांति कै तोहि जियायी ॥
तुमते कहें हम वचन प्रकासा । हम जो गयो ज्योतिके पासा ॥
ज्योति स्वरूप हमकहा बुझायी । अब तुम बरजहु काल बनायी ॥
तबही ज्योति वचन अस भाखी। यहि बालकको अब को राखी ॥
अवधि तोहार नियरि होय आयी। अब कोइ राखे राखि न जायी ॥
साखी-हम तीनो को धिगहै, जीवन धृग हमार ॥
हमसे बालक ना जिये, मिथ्या कीन्ह हँकार ॥
बालक तो जीवै नहीं, मिथ्या जन्म हमार ॥
यह चरित्र ना जानिया, काहि करें उपचार ॥

गरुड वचन-चौपाई ।

जो धिरकार तुम कीनपुकारा । अपने मनमें करहु विचारा ॥
गव अभिमान छोडु सब भारा । मन अपने तुम मानहु हारा ॥
वो तो पुरुष गर्ब नहिं भाखे । तुम यम काल अपने शिर राखे ॥

जो तुम ब्रह्मा मुक्ति गति पायी। तो तुम राखहु काल बचायी ॥
जो ब्रह्मा इतना नहि जानो। तौ काहे को आपा ठानो ॥
बोलहु जनि तुम गर्ब निदाना। तुम धिरकार आपको आना ॥
ब्रह्मा कस तुम आपा ठाना। ऊ गति काहू विरले जाना ॥
जो ब्रह्मा तुम मृत्युगतिजानौ। इठि कै ज्ञान तु काहि बखानौ ॥
वह तो पुरुष सबै ते न्यारा। अगम अपार पावे नहिं पारा ॥

साखी—ब्रह्मा विष्णु जाने नहीं, जाने नहीं महेश ॥
ज्योती आप न जानई, रचे जो कालको भेश ॥

चौपाई।

सुनु ब्रह्मा मैं कहौं बुझाई। तुमरे किये होय का भाई ॥
गर्ब गुमान सब देहु बहायी। तबहीं तुम सतगुरु पद पायी ॥

साखी—ऐसो काल बरजोर है, ग्रास्यो सत्तर योग ॥
अमृत नाम सो मन दई, लेहु अमर रस भोग ॥

चौपाई।

जो नहि ब्रह्मा सांच कै मानो। तौ यह बालक हमपै आनो ॥
जो प्रभु हम कहँ नाम सुनायी। ताकहँ चरित्र तुम देखहु आयी॥
सांच झूठ का करहु निबेरा। आंखिन देखि करहु बहुतेरा ॥
सत्यलोक अमरपुर डेरा। काल नहीं तब ताकहँ घेरा ॥
जो कोइ शब्द का करे निवेरा। सत्य लोक पावे सो डेरा ॥

साखी—जो संशय अब छूटे, घट सो चलै बरजोर ॥
सुमिरन दीन दयालका, पहुँचे सो वहि ठौर॥

चौपाई।

अस कहि गरुड यक ज्ञान विचारा। बालक लईसो उतरों पारा ॥

ब्रह्मा वचन।

अचरज बात ब्रह्मा को लागी। देखतु विष्णु गरुड तुम्ह त्यागी॥
तुमरे सन्मुख करे यह रंगा। तुमरी भाव भक्ति करे भंगा ॥

जो बालक जीवित लै आने। होय अचल तब जगत बखाने॥
ब्रह्मा विष्णु अस बात विचारे। गरुड बचन परिहास निकारे॥
उधर गरुड कीन अस अरम्भू। जो नहिं जाने हरिहर शम्भू॥
मानसरोवर गरुड जब गयऊ। ताकी सुधि हँसन तब पयऊ॥
आवहु गरुड महा सुखज्ञानी। मित्र सुनावहु लोक कि बानी॥
हँस अजरमुनि द्वीप महँ रहई। द्वीप देखिके बातैं कहई॥
मानसरोवर मांहि है भाई। उपजन विनशन तहाँ न पाई॥
मानसरोवर ज्योति बहुकीना। कामिनि कला पुरुष रचिदीना॥
सरोवर माहि रहे सब भाई। बिनशे देह मृत्यु जो पाई॥

अजरमुनि वचन।

कहो विहँसिमुनिकहवाँ तेआये। सो भेद मोहि कहु समझाये॥

---

१ इस पुस्तक गरुडबोध की१० ।१२प्रति मेरे सम्मुख रखी हुई हैं। जिनमें से १ प्रति सम्बत् १७०३ विक्रमी की लिखी हुई है जो मेरे पिता शिवरहर राज्य के पूर्व अमात्य कबीरपंथके विहार प्रांतीय स्तम्भ परमज्ञानी श्रीमान् यशस्वी गोपाल लालजीकी पुस्त-कालयकी है। और दूसरी प्रतियोंमें से ४ प्रतियाएँ सम्वत् १८०० से १९०० सम्वत् विक्रमी केबीचकी लिखी हैं। और १ प्रति सम्बत् १९१३ विक्रमीकी तथा ४ प्रतियाँ उसके पीछेकी लिखीं हुईहैं। सम्बत्१९०० तक की जितनी प्रतियाँ लिखी हुई हैं सबमें वही ऊपरकी चौपाई लिखी है और उनमें हंस अजरमुनिकाही मानसरो-वरमें गरुडजीसे मिलनेका हाल लिखा है किन्तु उसके पीछेकी प्रतियोंमें कहीं तो अजर-मुनि और कहीं चन्द्रमुनि लिखाहै; इतनीही नहीं ग्रन्थ में ऊपर लिखा है"चन्द्रमुनिवचन" तो नीचे लिखाहै" अजरमुनि द्वीप रहाय" कहीं लिखाहै हंस मुनि इस प्रकारसे भेद पडने-के कारण पुरानी प्रतियोंके अनुसारही" अजरमुनि" रखा है। योंतो उत्तरोत्तर की लिखी हुई प्रतियोंमें लेखक महाशयोंकी कृपासे ग्रन्थोंमें कुछ कुछ भेद होताही गया है तथापि १९००सम्बत् के प्रथमकी लिखी हुई पुस्तकोंमें है। इतना अन्तर नहीं है जितना १९१३ वाली प्रतिसे लेकर उसके पश्चात् की प्रतियोंमें है। इधर की लिखी हुई प्रतियोंमें कई तो ऐसी हैं जिनमें "अ" के स्थानमें समस्त पुस्तकमें "य काही प्रयोग किया है "अ" का गन्धभी नहीं है।

गरुड वचन ।

सुनहु अजरमुनि कहौं बुझायी । अकथ कथा कछु कह्यो न जायी ॥
सुनत हंस यह अकथ कहानी । तीनो देव बडे अभिमानी ॥
ब्रह्मा विष्णु लगायी बाजी । अपनीअपनी सब करहिं अवाजी
तब समरथ एक कला उपायी । बालक भेद न जानैं भाई ॥
तब हम एक बोल्यो बानी । बालक एककी मृत्यु तुलानी ॥
प्रथम तो बाद बहु ठाना । बालक देखत बहुत लजाना ॥
उन अपने जीव सोच बहुकीना । यही बालकको किनहु न चीना ॥
तब उन पुरुष सांच कर माना । है कोइ पुरुष आदि निर्वाना ॥
हारि मानि के विदा जो कीना । तुम्हरे द्वीप तानि पग दीना ॥
अब ऐसी युक्ति तुम ठानो । जाते होय सब काज प्रमानो ॥
बालक जिए सोई अब कीजे । साचा अमृत मोकहँ दीजे ॥
तीनों जने तब जाहिं लजायी । सत्य पुरुष की सत्य कै पायी ॥
ये तीनों तो गर्ब भुलाना । निर्गुण तो वे आप कर जाना ॥
महापुरुष कोइ मान न भाई । आप गर्ब दुनिया भरमाई ॥
सुनहुअजरमुनि हंस सो ज्ञानी । कैसे रहो सरोवर आनी ॥
कौन यतन सरोवर में आनी । सरोवर के गुण कहो बखानी
साखी—कैसा सरोवरमान है, कैसे रहे समाय ॥
किहि विधि इसको नांघि के, सत्यलोकको जाय ॥

अजर मुनि वचन—चौपाई ।

सुनहु गरुड तुम सत्य हो साधू । तुमरी भक्तिसो अहै अबाधू ॥
तुमतो आदि अंत सब देखा । कहो तुमहि जो सकल विशेखा ॥
जो कोइ आदि अंतके जाने । तासो कौन वृथा हठ ठाने ॥
सुनहु गरुड में कहौं प्रमाना । ताको कहिये कहा जो माना ॥
जो प्रभुकीअंत गतिजाने कोई । तासों पुनि सत कहिये सोई ॥

सुनहु गरुड साधुन के स्वामी । सबकी महिमा तुम भल नामी ॥
हम तो ज्ञान सब तुमसे पावा । तुव प्रताप हम लोक सिधावा ॥
साखी-समरथ नाम अमर पुर, अजर द्वीप अस्थान ॥
उहवाँ रहत हैं हंस सब, पावहिं पद निरवान ॥

चौपाई ।

अक्षय द्वीप पुरुष अस्थाना । तहवां रहैं सब हंस सुजाना ॥
सदा आनन्द होत तेहि ठाऊँ । नहिं तहँ चले काल कर दाऊँ ॥
साखी-हँसाविलासहिं द्वीप महँ, भोजन करहिं अघाय ॥
जरा मरण व्यापै नहीं, नहिं आवैं नहिं जायँ ॥

गरुड वचन ।

अमृत देहु बताइके, पुरुष नाम कहि देहु ॥
बालक लेहु जिवायके, इतना यश तुम लेहु ॥

चौपाई ।

कहहु पुरुष कैसे के बोला । कइसे प्रभु सो सम्पुट खोला ॥

अजरमुनि वचन ।

आपुहि में वह अमृत कीन्हा । आपुहि साहब कहि जो दीन्हा ॥
अमी बुन्द प्रथमहि उपजाया । अमी बुन्द ते अमृत आया ॥
साखी-ज्ञानी कहै विचार के, सुनो गरुड चित लाय ॥
गति की भक्ति दिढावहू, बालक लेहु जिवाय ॥
बालक लेउ अमर कै, अमी द्वीप चलि जाउ ॥
दृढ के भक्ति दृढावहू, अजर अमर होय आय ॥

गरुड वचन-चौपाई ।

कहै गरुड बालक अकुलायी । अमृत दैके लेहु जिवायी ॥

अजरमुनि वचन ।

सुनहु गरुड तुम ज्ञान गँभीरा । तुम तो पुरुष पाय अस्थीरा ॥

जाहु तुरत बरुण के ठाई। वरुण अहैं हमार गुरु भाई ॥
पवनै द्वीप रहे वह वैसा। तो सों कह्यो भेद है जैसा ॥
साखी-शीस श्रवण नहिं नासिका, इन्द्री साधे घाट ॥
यहि रहनी वह रहत है, सुरति शब्द के बाट ॥

चौपाई।

गरुड चले वरुण की ठाई। अमी द्वीप मोहि देहु बताई ॥
तुरतहि वरुण दीन उपदेशा। हमते पूछौ कौन सँदेशा ॥
तुम सब भेद जानत हौ भाई। तुरतहि जाउ श्रवणकी ठाई ॥
वहीं श्रवण कहै सब भेदा। वह तो करइ समर्थकी सेवा ॥
वह लौलीन प्रभू को जानै। साधु संतकी सेवा ठानै ॥
सत्य पुरुष को जानै भेवा। सकल खबर कह जाने देवा ॥
द्वीप द्वीपकी कहै जो बानी। जाहु जहां घर होय निर्बानी ॥
जाहू तुम उनही के पासा। सत्य शब्द कहो परकासा ॥
जहां कहूँ तहवां चलि जाऊ। अमृत लेके बाल पिआऊ ॥

सतगुरु बचन।

तुरत गरुड गये तब तहवाँ। सत्य पुरुष को द्वीप है जहवाँ ॥

गरुड वचन।

श्रवण हंस मोहिं कह समझायी। कौन ठाम अमृत देहु बतायी ॥

श्रवण वचन।

तब श्रवण यक बोलेउ बानी। पुरुषकी गति अजहूँ नहिं जानी॥
बिनु आज्ञा कैसे तुम कहऊँ। कौनी भांति भेद मैं लहऊँ ॥
है अमृत नहिं राखूँ गोई। इतना पातक लागे मोई ॥
पुरुषउथापि अमृत जो दीना। हमको कैसे नास्ती कीना ॥
साखी-कहे श्रवण मैं भाषेऊ, अमृत का सब भेव ॥
मारग कोई न जानई, ऐसो अखण्ड अभेव ॥

चौपाई।

तुरतहि जाउ निर्मल पासा। ताते पुजिहै तुम्हरो आशा॥
ताके संग जोइ मिलि रहई। ऐसो शब्द दोऊ मिलि कहई॥

गरुड वचन।

श्रवणदास कहि बहु समुझाओ। तुमरी दरशनको हम आओ॥
द्वीप सकल हम देखें भाई। सोई छाप मोहि देहु दिखाई॥

गरुड वचन।

निर्मल संग यक भवँर रहाई। सोई भौर ले सब भरमाई॥
निर्मल लेके लोकहिं जावे। भरमें जीव को लोक पठावे॥
इन दोनो कर जाने भेवा। फिरि भौसागर होय न खेवा॥
साखी—अमृतपिआव विचार के, पुरुष नाम कहि देहु॥
बालक लेहु अमराय के, इतना सांच गहि लेहु॥

चौपाई।

पुरुष नाम तुम जानो भाई। हमते कहा करहु चतुराई॥
पुरुष नाम है तुम्हरे पासा। तुम्हरे घट में सत्य निवासा॥
जैसे रहे पुरुषमें बासा। ऐसे पुरुष तुम्हारे पासा॥
एक नाम को अनेक विचारा। जिन जाना तिन उतरे पारा॥
प्रथम पुरुष अहै यक भावा। दुसरे पुरुष देह धरि आवा॥
तिसरे पुरुष परफुल्लित नाऊँ। चौथे पुरुष सत्यपुर गाऊँ॥

गरुड वचन।

कहो पुरुष कौन विधि बोले। कैसे के प्रभु सम्पुट खोले॥
कौन शब्द प्रभु बोलन लीना। कौन भांति कूर्म सो कीना॥
कौन यतन अमृत फल लावा। कौन यतन हंस सो पावा॥
कौन यतन उहां पुनि आवा। कौन यतन उन मान धरावा॥
बारह पालंग कूर्म जो कीन्हा। तेहि ऊपर प्रभु सेज्या दीन्हा॥
परफुल्लित होय साहिब बोला। उचरी बानी संपुट खोला॥

आपहि माहि आप प्रभु कीना । तहँते अमृत कूर्म को दीना ॥
अम्बु नाल ते अमृत आया । अम्बुज ते अमृत उपजाया ॥
साखी-श्रवण कहे विचारि के । सुनो गरुड चित लाय ॥
धीरज भयो तेहि दृढ भये, अमृत पिये अघाय ॥

चौपाई ।

सन्धि नाम प्रथम सहिदानी । ऐसे भये सब जीवन जानी ॥
भयउ नाम अकह उगासा । सुकृत जोइन नाम प्रकासा ॥
अजीत है ओंकार हंकारा । निसरत है सो ओही द्वारा ॥
उत्पति ऊर्द्ध गे ऊर्द्ध विशेखा । सो हम तुमसे भाषेउ लेखा ॥
भयो प्रकाश सुरति जो कीन्हा । ऊर्द्ध तेऊर्द्ध प्रभु पार जो लीना ॥
साखी-अध उर्द्ध दोऊ लखै; पार जो रहे ठहराय ॥
कहे श्रवण बहु गरुड से, सुखसागर रहे समाय ॥
लोक लोकमहँ प्राण है, रहे द्वीप अस्थान ॥
उदय अस्त तहवाँ नहीं, ब्रह्म विष्णु नहिं खान ॥

चौपाई ।

देह धरी सुख बोल जो आवा । तबही परम पुरुष कहलावा ॥
अजर अमर अधार हैं ठाऊँ । अहै अटल वा पुरुष को नाऊँ ॥
वही पुरुष का सुमिरन करई । आवा गमन भव सागर तरई ॥
वही शब्द है अमृत रूपा । वही शब्द अहै अजब अनूपा ॥
साखी-वही शब्द गहु सत्यके, बालहिं कहु समुझाय ॥
बालक लेहु यमरायते, अमी द्वीप पहुँचाय ॥

चौपाई ।

विष्णुहि लेके माला देहू । शब्द हमार प्रमान के लेहू ॥
विष्णुहि मालातिलक औछापा । और न दिलमें आनहु आपा ॥
साखी-श्रवण कहे गरुड से, यही तुम्हारो काम ॥
देहुउपदेश अब जायके, बालहि दीजे नाम ॥

चौपाई।

धन्यगरुडमृत्युलोक ते आओ।बहुरि जाय मृत्यु लोकचिताओ
अबजाई तुम विष्णु चिताओ। जो वह चेत तो नाम दृढाओ॥
लीन गरुड बालक अगराई। अमृत पीवत अती जुडाई॥
बालक अमृत माहिं जुडाना। युगन युगन को क्षुधा बुझाना॥
गरुड विदा हंसन सों लीना। मस्तक नाइ प्रदक्षिण कीना॥

श्रवण वचन।

तब हंसा पुनि कीन निहोरा। तुमतो गरुड कीन्ह यह जोरा॥

गरुड बचन।

तुमही छाडि शीस केहि नाऊँ। तुमरे चरण कमल चित लाऊँ॥
तुमतो अमृत दीन दिखायी। सतगुरु शब्द लीन अर्थायी॥
शीस सोई जो साधु को नावे। पूजा सोई जो नाम लौ लावे॥
मुख सोई जो उचरे नामा। देह सोई जो प्रभुके कामा॥
देवत सोई जो बन्दगी ठाने। दया सोई अमि अन्तर आने॥
साधू सोई जो ममता मारे। ममता मारि आपको तारे॥
साखी-बालक लिये अमरकरि, विष्णुहि कह्यो समुझाय॥
चले गरुड मृत्यु लोकको, ब्रह्मा रहे लजाय॥

चौपाई।

यहिविधिबालक लीनजिवायी। सकलसभा तहँ देखे आयी॥
धन्य धन्य सब करहिं पुकारा।धन्य गरुड है रहनि तुम्हारा॥
धन्य धन्य सबही मन भावा। गरुड बोल सब ऊपर आवा॥
नाग लोग की कन्या रहाई। अचरज होय कछू न कहाई॥

नागकन्या वचन।

अविगत मताहै गरुड तोहारा। कोई न जानै भेद अपारा॥
इतना कहि अनुराग सो धरिया। शीस नाइ चरण पर परिया॥

वासुकि देवकी कन्या भाई। शीस नाइ के विन्ती लाई ॥
रूप उग्र बहुते उजियारा। मानिक लवैके माहि लिलारा॥
एतिक आगरी किये सिंगारा। जगमग ज्योति बरे उजियारा ॥
सो पुनि कन्या विन्ती करई। गरुड के चरण आय शिर धरई ॥

वासुकि देवकी कन्याका वचन।

हो साहिब तुम बन्दी छोरा। नष्ट जाय जिव तुमहिं निहोरा ॥
हो साहिब विन्ती सुनि लेहू। हमरे गृहै तुम चरण धरेहू ॥
हम दीक्षा प्रभु लेव तुम्हारा। जिवका कारज करो हमारा ॥

गरुड वचन।

कहे गरुड सुनु कन्या वारी। तुम सबहिनकी प्राणपियारी ॥
पूछहु वासुदेव सों जाई। आज्ञा देहिं तस करो उपाई ॥
अस तुम जाय सिखापन लेहू। पुनि फिर के हमही दल देहू ॥

कन्या वचन।

व्रजबाला कन्या अस बोले। जो हम कही कबहु नहिं डोले॥
साहिब विन्ती सुनो हमारो। सकल समाज संग पग धारो ॥
इन्द्रलोक ते इन्द्र बुलाये। सुर नर मुनि गँधर्व जो आये ॥
चले विष्णु जहँ गहरन लायी। शिव ब्रह्मा तहँ चले रिंगायी ॥
तेतिस कोटि देव तहँ आये। सिद्ध चौरासी सबै सिधाये ॥
नौ नाथ अरु सब बचे बचाये। सबही चले रहे नहि भाये ॥
शंख वीण धुनि बाजे भाई। इन्द्र को बाजा अति घहराई ॥
ताल मृदंग और शहनाई। सब ही बाजन बाजे भाई॥

साखी–इन्द्र के बाजन बाजते, भये पताले त्रास ॥
वासुकदेव डरि कर्मपे, बैरी आयो पास ॥

---

१ चमके।

गरुड वचन ।

ब्रजबाला कन्या हँकरायी । आयसु देह के आगु रिंगायी ॥
बासुकिदेव सों कहु समझाई । साधु रूप सब आवैं भाई ॥
सुनतै कन्या तुरत रिंगायी । वासुकिदेव सों कहि समझायी ॥

कन्या वचन ।

निर्गुण भक्ति गरुड जो ठानी । तेहि कारण हम गरुडहि मानी ॥
होहु सुचित्त सबै परिवारा । निजकै मानहु बचन हमारा ॥
साखी–सकल साधु इहँ आवहीं, होय चौका विस्तार ॥
चित में कोइ डरौ नहीं, वह हैं भक्ति अधार ॥

वासुकिदेव वचन– चौपाई ।

ब्रजबाला कन्या सुनु आनी । सबही तुरत तु आन बुलाई ॥
जाहु तुरत गरुड के ठाऊँ । दाया करहु धरहु सब पाऊँ ॥

सतगुरु वचन ।

सुनि बाला लै गयउ विमाना । दया करहु सब संत सुजाना ॥
जबहिशेष प्रतीति मन आयी । तबही गरुड सु कीन्ह पयानी ॥
जब गरुड जो चले रिगायी । बाजन बाजे वरनि न जायी ॥
बाजे डमरू हने निशाना । महादेव जब कीन्ह पयाना ॥
सबहि समाज पताले गयऊ । इच्छा भोजन सबही लयऊ ॥
एकोत्तर सै नरियर आना । बहुत भांतिके कीन्ह मंडाना ॥
जबही गरुड जो सुमिरन कीन्हा। तब हम उनको दर्शन दीना ॥
गरुड आइके मस्तक नाये । शीस नवाइ चरण चित लाये ॥
सकल जमात उठि भई भाई । सबहिन उठि के मस्तक नाई ॥
तब हम पुनि चौका विस्तारा । बहुत भांति के साज सुधारा ॥
सुथरी मिठाई उत्तम पाना । ब्रजबाला सबही कछु आना ॥
जब तिन सबै साज सँवरावा । तब हम लोक ते हँस हँकरावा ॥
आये साधू लोक से भाई । जग मग ज्योति बरइ अधिकाई ॥

बाजे ताल मृदंग अपारा। उठे रँगसो अनहद झंकारा ॥
तारी उठे तत तत सों सारा। हंसे सबै सब साधु विचारा ॥
निर्गुण भक्ति कीन्ह लौलायी। चहुँ दिशि अगर रहा महँकायी ॥
देख सभा सब मोही भाई। सब मोहे कछु कही न जाई ॥
मोहि नाग नागेश्वर भारी। मोहि रही सब सभा विचारी ॥
मोहे गण गँधर्व मुनि देवा। कोई भक्त का जाने न भेवा ॥
वासुकिदेव अस्तुति अनुसारी। धन्य कवीर जो भक्ति तुम्हारी ॥
पायो दर्श धन्य भाग हमारो। धन्य कवीर यहाँ पग धारो ॥
धन्य कवीर तुम्हारी वानी। मोहि रही सब भगतिन रानी ॥
कीन्हो भक्ति पहर दुइ भाई। अति आनँद होय मंगल गाई ॥
पुनि उठिके हम आरति लीना। एकोतर नरियर मालुम कीना ॥
परवाना व्रजबालहि दीनी। वह शिर नाइ बन्दगी कीनी ॥
पुनि समरथ की अस्तुति सुनायी। दीन प्रसाद सबहिं बरतायी ॥
सब संतन लिन माथ चढाही। आशिष दीन सकल मिलि ताही ॥
दिन दशके आदर करि लीना। सेवा भक्ति बहू बिधि कीना ॥
संत साधुको विदाई दीना। चादर धोती सबही लीना ॥
सबहि कहै मम आशिषलीजो। साधुन के चरणें चित दीजो ॥
ऐसी भाँति विदा जो कियऊ। आपु आपु सब घरहिं सिधैऊ॥
चलत प्रेम सबहि को भाये। बहुत भाँति की अस्तुति लाये ॥

साखी-कहैं कवीर धर्मदाससे, यहि विधि भौ विस्तार॥
गरुड ज्ञान सबसे कियो, हारे सबे भुआर ॥
बक्ता के कण्ठ बसूँ, श्रोतहि श्रवण आहिं ॥
संतनके शीश बसूँ, ज्ञानिन हृदय माहिं ॥

इति श्रीबोधसागरान्तर्गतकवीरधर्मदाससम्वादे
गरुडबोधवर्णनो नाम षष्ठस्तरंगः ।

गरुडबोधका संक्षेपसार ।

प्रायः कबीरपन्थी लोग ऐसे गरुडबोधादि ग्रंथोंके भावको न समझ कर अन्य वैष्णव आदि सम्प्रदाइयोंसे इन्हीं ग्रन्थोंके प्रमाण द्वारा वाद करके परस्पर रागद्वेषमें फँसकर, निन्दाके पात्र बनकर, नास्तिकादि नामों के लक्ष्य बनेहैं । और जिस प्रकारसे इनमें अविद्याका विशेष प्रताप फैलाहै उसी प्रकार से अन्य सम्प्रदायवालोंमें भी अज्ञान देवने अपना राज्य जमा रखा है । जिस कारणसे विद्या और ज्ञानका तो उनमें प्रवेश भी होने नहीं पाता । यही कारण है कि, वे भी अपने इष्ट देवके स्वरूप को न समझकर कबीरपंथियों के तर्कको सुनकर उन्हें समझाने या उत्तर देकर उनका समाधान करनेमें असमर्थ होनेके कारण उन्हें नास्तिक और निन्दक आदि नामों से पुकारते और उनसे द्वेष करते हैं । किन्तु दोनोंदलोंमें जो ज्ञानी और समझदार हैं, आत्मतत्त्व में जिनका प्रवेश हुआ है, जिन्होंने शास्त्र और ग्रन्थोंका मनन करके उनके भेदको समझा है, वे न तो किसी-के ऊपर बहिरदृष्टि और द्वेष अथवा निन्दा के भाव से तर्कही कर सकतेहैं न उनके वाक्य को सुननेवाले ज्ञाता लोग उनमें नास्तिकताहीका अनुमान कर सकते हैं ।

कबीरपंथमें जितने ग्रन्थ वर्तमान हैं वे सब अध्यात्मविद्याकी पुस्तक हैं । जो कुछ उन ग्रन्थों में लिखाहै सबका आध्यात्मिक अर्थही ग्रहणकरने योग्य है । यदि आध्यात्मिक अर्थको छोडकर साधारण अर्थ और शब्दार्थकोही ग्रहण किया जाय तो न जाने असम्भवता आदिक कितने दोष आकर उपस्थित हो जावेंगे ।

और स्वयम् कबीर साहिब में ऐसे २अनर्थका दोष लगसकेगा कि, जिस कलंकको मिटाना कठिन ही नहीं बरन् असम्भव है। इतनाही नहीं इनग्रन्थों में बात बातमें आध्यात्मिक अर्थभी बतलाया गयाहै और जिस ग्रन्थकी जैसी प्रक्रिया चली है वैसेही-उसका निर्वाह भी किया गयाहै। जो लोग मनन और विचार किये बिना केवल शब्दों और पदों को लेकर लडते झगडते हैं उन्हें कबीर साहिबके इस मसले पर ध्यान देना चाहिये कि-" कबीरका गाया गावेगा । तीन लोकमें धक्का खावेगा ॥ कबीरका गाया बूझेगा । तीन लोक वहि सूझेगा "- जैसे इसी ग्रंथमें यदि गरुड का वही साधारण अर्थ लियाजावे जैसा सर्वसाधारण समझते हैं, तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि विष्णु उपासकोंके समक्ष इस पुस्तकको बाँचने वाला मार खाये बिना नहीं रहेगा -किन्तु जब उसी का अध्यात्मिक अर्थ समझेगा और दूसरों को समझावेगा कि, गरुड नाम है जीवका, विष्णु नामहै सतोगुणका अर्थात् सतोगुणभावों करके सम्पन्न जो मुमुक्षु है उसको जब ज्ञानी गुरु मिलताहै तब उसे त्रिगुण (रजोगुण) (ब्रह्मा) सतोगुण (विष्णु) तमोगुण (शंकर) के जाल से निकाल कर त्रिगुणातीत करदेता है अर्थात् सत्यपुरुष रूप उसके प्रत्येक आत्माके स्वरूपका ज्ञान करा देता है। तब गरुड रूप मुमुक्षु तीनों गुणोंको जीत कर शरीर निर्वाह अथवा प्रारब्ध बल से यावज्जीवन सतोगुण के दिव्य गुणों को सम्मुख रख कर आनन्दपूर्वक विचरता और दूसरों को भी अधिकार पूर्वक उपदेश दकर सत्यपदकी पारख बतलाता है। इसी प्रकारसे कबीर पंथके सर्व ग्रन्थों का आशय आध्यत्मिक है।

जो इन ग्रन्थोंको पढकर अपने आत्माके कल्याणार्थ सत्य अर्थको ग्रहण न करके केवल शारीरिक सुख और

मनकी तुच्छ २ वासनाओंको पूर्ण करने के लिये अपने समझे विना दूसरे जीवों को मिथ्या भ्रम में डालते हैं वे मिथ्या भ्रम को उठाकर पाप के भागी बनते हैं। सद्गुरु की कृपा होगी तो ग्रन्थों को छपवा लेने के पश्चात् सब ग्रन्थों के सारको प्रदर्शित करानेवाला एक स्वतंत्र पुस्तक प्रकाशित करके मिथ्या प्रचलित भ्रम को दूर करनेका प्रयत्न करूँगा।

इस के प्रथम भोपालबोध आदि ग्रन्थ जो छपे हैं उनका भी भाव आध्यात्मिक समझना चाहिये।

इति

श्रीबोधसागरान्तर्गत

ग्रन्थ गरुडबोध

समाप्त ।

भारतपथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित।

श्री-हनुमानबोध।

खेमराज श्रीकृष्णदासने

मुम्बई

निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रकाशित किया।

संवत् १९८०, शक १८४५.

श्री कबीर साहिब।

अथ श्रीबोधसागरे

सप्तमस्तरंगः ।

ग्रन्थ हनुमानबोध ।

अजर ज्ञान करुणायतन, सत्य कबीर जगतार ॥
तासु चरण बन्दन किये, होवे जगत उधार ॥

धर्मदास वचन-चौपाई ।

धरम दास विनवे करजोरी । तुम समरथ हौ बन्दी छोरी ॥
युगन युगन में तुम चलि आये । आदि अंत की खबर लगाये ॥
एक अनुराग मोरे मन आया । सो प्रभु कहु करि मोपै दाया ॥
हनुमतको कब मिल्यो गुसाँई । सो प्रभु मोहि कहिये समुझाई ॥

---

१ ह इति प्रसिद्धे नु इति वितर्के, इस व्युत्पत्तिसे जो मान्य के योग्य होवे, अथवा- "मैं माया तत्कार्य नहीं और वह मेरा नहीं किन्तु मैं तिसका द्रष्टा हूँ" इस निश्चयवानका नाम हनुमान है । सो मन इन्द्रियादिक जड पदार्थोंकी अपेक्षा प्रत्येक आत्माही (चैतन्य होने से) मान्य करने योग्य है । इस से प्रत्येक आत्माको ही हनुमान कहते हैं । अथवा-

अनादि पक्षके षट् वस्तुओंमें जीव ईश्वर दोनों भाई हैं । उनमें राम ईश्वर हैं और लक्ष्मण जीव रूप मुमुक्षु हैं । मनरूप इन्द्रदेवको जीतने वाला गुरु ही इन्द्रजीत है । सो गुरुरूप इन्द्रजीतके ज्ञानरूप शक्ति के मारने से मुमुक्षु रूप को मूर्च्छा हुई अर्थात्- आवर्ण बिशिष्ट अज्ञानांशका नाशही मूर्च्छा है, तब विक्षेप विशिष्ट अज्ञानांश रूप हनुमानने शरीररूप पर्वतसे प्रारब्ध रूप संजीवन बूटी लाकर मुमुक्षुरूप लक्ष्मण की मूर्च्छा छुड़ायी अर्थात् निज स्वरूप से भिन्न सर्व नाम रूप जगत मिथ्यात्वका भाव निश्चयरूप बोधिक होना अर्थात् संसारकी प्रतीतिपूर्वक जो जीवन मुक्ति सोई मूर्च्छा खुलना है ।

हनुमत कहिये महा अभिमाना। कैसे लीन साहब सो पाना॥
कैसे हनुमत सेवा ठानी। कैसे इन बचने सो मानी॥
यह वृतांत कहो तुम ज्ञानी। रामचन्द्रके हनुमत मानी॥
कैसे तिन हिरदय नाम समाई। सब दया करि तुम कहहु गोसाई॥

कबीर वचन।

कहै कबीर सुनु धर्मनि आयी। त्रेता युग महँ हनुमंत चिताई॥
सेतुबन्ध रामेश्वर हम गयऊ। तहवाँ पहुँचि हममुनीन्द्र कहयऊ॥
साखी-सेतु बन्ध में जायके, देखा हनुमत वीर॥
बहुत कला है तासुकी, सबही बजर शरीर॥

मुनींद्र वचन-चौपाई।

कहत मुनीन्द्र सुनो हनुमाना। तुमको अगम सुनाऊँ ज्ञाना॥
तुम्हरे मनमें जो अभिमाना। तजिअभिमान सुनहु तुम ज्ञाना॥
सत्य पुरुष की कथा सुनाऊँ। अगम अपार भेद बतलाऊँ॥
सत्यसुकृत की कथा यह भाई। जाकर तुम मर्म नहिं पाई॥
सत्य पुरुष की कथा अपारा। ताकर तुमही करहु विचारा॥
ताकी गति तुम जानत नाहीं। जो पुरुष पूरण सब माहीं॥
काहि की सेवा करहू भाई। सो सब मोहि कहो समझायी॥
रामचन्द्र कहिये औतारा। परलय जाय सो बारम्बारा॥
साखी-सेवत हौ तुम कौनको, करो कौन को जाप॥
सो मोको बतलावहू, कौन तुम्हारो बाप॥

आशय यह है कि, हनुमान नाम अज्ञान विशिष्ट किन्तु विवेकको धारण करनेवाले जीवका है। अथवा इसी प्रकार से गुरुमुख द्वारा ग्रंथका आशय जानने के प्रयत्न करनेवाले को ज्ञान पारखी गुरु उत्तम रीति से समझावेगा तब इन ग्रन्थों का आशय समझमें आसकता है नहीं तो स्वयम् अभिमानमें मरनेवालों को सत्यका पथ कदापि नहीं मिलता।
दोहा-वेद उदधि बिन गुरु मुखलखे, लागत लौन समान॥
बादर गुरुमुख द्वार होय, अमृत सो अधिकान॥

हनुमनान वचन-चौपाई।

सुनो मुनीन्द्र दृढकरिके बानी। तुम जग महँ हौ बड सुज्ञानी ॥
मेरी कला न जगहि छिपानी। तुम मेरी गति नाहीं जानी ॥
पौरुष पराक्रम बल है मोरा। मो सम और नहीं कोइ जोरा ॥
बावन बीर वसौं जग माहीं। मो सम प्राक्रम कोइ को नाहीं ॥
सब बीरन में मैं सरदारा। मेरी कला सब में अधिकारा ॥
सब जग जाने सब मोहि पूजे। मो सम इष्ट और नहिं दूजे ॥
जो चाहों सो कारज सारों। इष्ट करे तो तुरत उबारों ॥
ऐसो प्रसिद्ध जग हम आहीं। सब कोइ जानें तुम जानत नाहीं॥
साखी-सुनो मुनीन्द्र मोरी गति, मो सम और न देव ॥
चाहे सो कारज करूँ, दृढ कै साधे सेब ॥

मुनीन्द्र वचन।

सुनु हनुमान वीर ते बंका। आपै थाप बजावै डंका ॥
आपा थापे भला न होयी। आपा थापी सब गये विलोयी॥
समरथ की गति तुम ना पाये। आपा थापि तुम रहे भुलाये ॥
समरथ पुरुष और है कोई। ताकी गति जानै नहिं लोई ॥
हनुमान तुम छोड़ो अभिमाना। तौ समरथ को भाषों ज्ञाना ॥
समरथ हुकुम चले जग माहीं। तुम उनकी गति जानत नाहीं ॥
बावन वीर कहै हम जानी। काल पुरुष की सब अगुवानी॥
सब बैरिन को काल धरि खावे। जो सत्यपुरुष को गम नहिं पावे॥
चौसठ योगिन बावन बीरा। काल पुरुष के बसैं शरीरा ॥
काल पुरुष सब रचना कीना। बीरन को सरदारी दीना ॥
मारहि मार सबन को करई। यह अपराध कौन शिर परई ॥
कालपुरुष को करम अपारा। कैसे धौं करिहौं निरवारा ॥
सो अब मोहि बताओ भाई। बल पौरुष कछु काम न आई॥

तुम हनुमंत सांच हौ बीरा। तुमरे इष्ट अहै रघुवीरा ॥
ताकी तुम जो करो बड़ाई। तुम समरथ को गम्य नहिं पाई॥
राम काज तुम भले सुधारा। ताके हुकुम लंका तुम जारा॥
वह जगमें कहिये अवतारा। अगम भेद तुम नाहिं विचारा॥
उनही लागि रहै सब कोई। जो जस सुमिरे पावे तस सोई॥
तुम भूले प्रभुता की माहीं। प्रभुता जगमें अस्थिर नाहीं॥
स्थिर घर कोई नहिं जाने। प्रभुता बडाई सब मन माने॥
जौ तुम मानों कहा हमारा। तो तुम पाओ समरथ दर्बारा॥

साखी-समरथ गति अति निमल, प्रभुता अहै मलीन॥
जिनकी तुम सेवा करो, सोउ न पावैं चीन॥

हनुमानवचन-चौपाई।

सुनो मुनीन्द्र बचन हमारा। रघुपति हैं सबके सरदारा॥
इनही समान कोइ दूसर नाहीं। तीन लोक के साहिब आहीं॥
इन प्रताप हम जग सत जाना। हमसो कहा कथौ तुम ज्ञाना॥
रघुपति को हम जानैं परचा। हमसों कहा कथौ तुम चरचा॥
सागर ऊपर पथर तिराया। ऐसा नाम अहै रघुराया॥
मैं पौरुष बल आपन जानूँ। कहा कोई का नाही मानूँ॥
यती नाम जानै जग मोहिं। सो मैं भाव सुनाऊँ तोहिं॥
तुम जो पूछी पिता की बाता। पिता कहतहूँ औ फिर माता॥
महादेव देवन सरदारा। जिनको पूजे सकल संसारा॥
नाहि बीज की काया मोरी। बजर अंग पायो सब जोरी॥
गौतम ऋषिकी पत्नी नारी। नाम अहिल्या राम उबारी॥
नाम अंजनी पुत्री ताकी। जनम लियो कूख में जाकी॥
साधु रूप धरि शिव बन आये। जहाँ अंजनी को मंडप छाये॥
प्यास प्यास कहि बोले बानी। शिव की गतिमाता नहिं जानी॥

कह अंजनी तुम पीयहु पानी । तब शिव बोले और हि बानी ॥
तैं निगुरी हम साधु विचारा । तेरा जल नहिं करौं अहारा ॥
कहै अंजनी गुरु कहँ पाऊँ । जंगल ते उठि मैं कहँ जाऊँ ॥
तब शिव कहै साधु हैं हमही । दीक्षा लेओ देत हम तुम्हही ॥
सिंगी नाद रहैं शिव पासा । फूक्यों कान रही तब आसा ॥
छल करि बीज दीन्ह तब डारी । तासों उपजी देह हमारी ॥
शीव बीज पौरुष बलवाना । योनी संकट हम नहिं जाना ॥
कान राह लीन्हा अवतारा । पवन पुत्र जाने संसारा ॥
पिता मात की सब विधि भाखी । कहौ तो और सुनाऊँ साखी ॥
सत्य बात मेरी है भाई । सेवा करौं सदा रघुराई ॥
समरथ और नहीं है कोई । रामचन्द्र बड समरथ होई ॥
समरथ समरथ कहा बखानो । मैं तो समरथ राम को जानो ॥
बहुत कहत हौ बात बनायी । राम नाम तुमहू नहिं पायी ॥
जाकी थाप तीन पुर माही । राम समान और को आही ॥
बुद्धि ज्ञान तबही बनि आवे । जो कोइ राम पदारथ पावें ॥
ज्ञान भक्ति सब लागै नीका । विना राम सब जानो फीका ॥
सुनो मुनीन्दर बात हमारी । सेवो राम सदा सुखकारी ॥
राम विना नाहीं कहुँ जागा । राम नाम मेरा मन लागा ॥
दशरथ घर लीन्हा अवतारा । उनकी गति है अगम अपारा ॥
बडे बडे उन कारज कीन्हा । तुम मुनीन्द्र भेद नहिं चीन्हा ॥

साखी–सुनो मुनीन्द्र मोरगति, रामनाम है आदि ॥
सो दशरथ घर औतरे, उनका मता अगादि ॥

मुनीन्द्र वचन–चौपाई ।

कहे मुनीन्द्र सुनो हनुमाना । साधु भाव गति तुमहूँ न जाना ॥
राम नाम सब जग गोहराई । काहे साधु होय नहिं भाई ॥

राम नाम हम नीके जाना। तुमका मोसों करो बखाना॥
रमता राम बसे सब माहीं। ताहि राम तुम जानत नाहीं॥
ऐसो राम आहि अवतारा। जिन लंकापति रावन मारा॥
काल रूप सब करे संघारा। ताको सुमिरन करै संसारा॥
घट घट बोले कालकी छाहीं। भेद भाव तुम जानत नाहीं॥
यह तो राम अहैं अवतारा। विना राम नाहीं निस्तारा॥
परलय तर जिव रहै भुलायी। काल की गम्य काहूँ नहिं पायी॥
सुनु हनुमत तुम मानत नाहीं। गाल गह्यो है तुम्हरी बाहीं॥
ताते तोहि बूझि नहिं परई। यह औतार काल सब धरई॥
बार बार धरि यह औतारा। तीनों पुर को करै सँहारा॥
काल कला कोइ जानै नाहीं। सूक्षम व्यापी रहै सब माहीं॥
समरथकी गति काल सों न्यारी। ताको कहा जानै संसारी॥
जो तुम हेतु करि पूछौ मोंही। तौ सब भाषि सुनाओं तोंही॥
समरथकी गति अगम अपारा। तुम नहिं जानो मर्म विचारा॥
दृढ प्रतीत करौ तो कहिये। साधु होइ साधूगुण लहिये॥
समुझा विना को करे विवेखा। विना विवेक सत्य को देखा॥
विना सत्य उतरे नहिं पारा। राम राम कहि करौ पुकारा॥
ऐसे कारज होय नहिं भाई। कौन भाँति ते साधु कहाई॥
यती नाम जो अहै तुम्हारा। षट सो यती बसै संसारा॥
कार्तिकभीष्म शंकर अरुगोरख। लछिमन महाबली बड पौरख॥
छोटे तुम हनुमान कहाये। षट मिलि के जग नाम चलाये॥
सो यती षट सब बसे संसारा। विना सतगुरु सब यमके चारा॥
कालरूप का सकल पसारा। कैसी विधि कारहौ निरुवारा॥

---

१ इन षट यतियों के नामोंमें कई ग्रन्थोंमें कई प्रकार से लिखा है जो ठीक जान पड वही रहने दिया है।

सुनो हनुमत मेरी बाता। सत्य पुरुष है समरथ दाता ॥
ताका तुमसों कहौं संदेशा। सुमिरण करो तजो यम भेशा ॥
सत्य समरथ है पैले पारा। काल कला उपज्यो संसारा ॥
सोइ समरथ है सिरजन हारा। तीनों देव न पावैं पारा ॥
साखी—समरथ की गति को लखै, शिव विरंचि नहिं जान ॥
काल अकाल तहाँ नहीं, पूरण पद निर्वान ॥

हनुमान वचन—चौपाई।

कहत मुनीन्द्र अकथ कहानी। काल काल की बोलो बानी ॥
काल काल कहि मोहि डराओ। तुमतो कालकर गति ना पाओ॥
काल पुरुष आपे वह होई। और काल देखा नहिं कोई ॥
आपुहि करता आपुहि काला। चौदह भुवन आपे रखवाला ॥
काल पुरुष ते और न कोई। निश्चय कै मैं माना सोई ॥
सबका पिता काल है जोई। ताकी गती लखै ना कोई ॥
ज्योति स्वरूप जग उजियाला। ताका नाम धरा तुम काला ॥
जो तुम कहौ सबै हम जानी। सुनो मुनीन्द्र मोरी बानी ॥
रचना सकल काल की ठानी। तुम अपने मन हौ बड ज्ञानी ॥
काल पुरुष गति परे न जानी। सो हम जानि छानि के मानी ॥
काल पुरुष ते बडा न कोई। उनके ऊपर और न होई ॥
जाको नाम निरञ्जन राया। तीन लोकमें ताकी माया ॥
उनते और नहीं कोइ दूजा। तीन लोकमें उनकी पूजा ॥
तीनों देव जो उनको ध्यावैं। ते भी उनको पार न पावें ॥
ताको तुम सूक्षम करि जानो। तुम्हरे मन काहे नहिं मानो ॥
इतनी भयी हनुमान मुखबानी। रचना सकल काल की खानी ॥
उनको पार बताओ मोहीं। उठि के शीश नवाऊँ तोहीं ॥
जो तुम आदि अंत सब जानो। तो तुम ज्ञान अब हमसे ठानो ॥

पहिले सुनो हमारी बाता । तुम मुनीन्द्र हौ बड ज्ञाता ॥
मोरे पौरुष है बड जोरा । जन्म लेत कीन्ह घनघोरा ॥
जो दिन जन्मभयो महि मोरा । उदय भानु देखि मैं दौरा ॥
सूरज बाहर आवन नहिंदीना । निकसत तुरत लीलि मैं लीन्हा ॥
एक फलांग उर्धाचल गयऊँ । सो पौरुष मैं तुमसे कहेऊँ ॥
माता कीन जब बोल अधीना । उनके कहे छाडि हम दीना ॥
सूरज छाडि दीना हम जबहीं । जग प्रकाश भयो पुनि तबहीं ॥
जन्मत की यह कथा सुनाई । कहो तो और सुनाऊँ भाई ॥
राम प्रताप काज हम कीन्हा । सो मुनीन्द्र नाहीं तुम चीन्हा ॥
एक समें जो राम बतायी । लंका खबर लाओ तुम जायी ॥
लंका छोडि पलंका गयऊँ । जाय नगरमें ठाढो भयऊं ॥
तब तिन कही यह नहिं लंका । पीछे तजि आयऊ पलंका ॥
कहांलों कथा कहौं जो भाई । अपने मुख कहा करौं बडाई ॥
लक्ष्मण मूर्छित गिरै भुई भाई । तब दोणागिरि आनि जिवाई ॥
जेहि पै वही सजीवन होती । दैत्य न छलि कीन्ही बहु जोती ॥
रातहिं को दोनागिरि लाये । रामवीर[2] को तुरत जगाये ॥
यही दोनागिरि लेके दौरा । फिरि के धरो जाइ तेहि ठौरा ॥
ऐसे कारज अनेक सवाँरे । उनहि प्रताप कार्य उजियारे ॥
साखी–सुनो मुनीन्दर मोर गति, पौरुष औ बल जोर ॥
अपना गुण मैं जानि के, कासों कहों निहोर ॥

---

१ जब शमदमादि का अभ्यास करके मुमुक्षु ज्ञान प्राप्त करनेके निकट पहुंचता है तब यदि प्रारब्ध उसी शरीर तक होती है तब तो आत्मज्ञान को प्राप्त होजाता है और जीवन्मुक्त पद को भोगता है किन्तु यदि वर्तमान शरीरका प्रारब्ध अनेक शरीरका कारण होता है तब वह ज्ञान कुछ समय के लिये छिप जाता है ।

२ वीर=भाई । रामवीर अर्थात् लक्ष्मण ।

मुनीन्द्र वचन-चौपाई।

बड हनुमान पौरुष तुव आही। आदि पुरुष तुम जानत नाही ॥
समरथ रूप नहीं कोइ जानै। उरली बात सब कोइ बखानै ॥
समरथ गति कोइ नहिं जानै। बिनु देखी सो कही को मान ॥
बल पौरुष हम सबबिधि जाना। तीन लोक में सो करत पयाना ॥
तीन लोकमें अमल तुम्हारा। चौथा लोक सतगुरुका न्यारा ॥
तुमतो निरञ्जन निजकर जानी। ताका हुकुम लीन्ह शिर मानी ॥
पुरुष निरञ्जन ते है पारी। समरथ लगि है बास हमारी ॥
तहां काहु को बास न होई। वहां पहुँचि सक नहिं कोई ॥
यहाँ तुम कार्य करत हौ भाई। तुम्हरे इष्ट अहैं रघुराई ॥
सोऊ कला निरञ्जन केरी। सत्य पुरुष गति तुम नहिं हेरी ॥
साखी-तीन लोकमें नाम निरञ्जन, जाकी तुम सिफत करी ॥
वह कोइ समरथ और है, जिन यह सब मांड धरी ॥

हनुमान वचन-चौपाई।

सुनो मुनीन्दर दृढ करि ज्ञाना। तब तो भेद भया निर्बाना ॥
समरथ को अब भेद बताओ। हम सों नहीं कछु भेद दुराओ ॥

मुनीन्द्र वचन।

सुनु हनुमत कहों निज ज्ञाना। तो सों भाषों भेद विधाना ॥
समरथ को अब भेद बताऊँ। तुम सों भेद अब नाहिं दुराऊँ ॥
आदि अनादि पार के पारा। ताको अगम्य अब सुनो विचारा ॥
जो प्रतीति होय जिव माहीं। सत्य शब्द समरथ की छाहीं ॥
समरथ शरण बडा है भाई। बल पौरुष सुखसागर पाई ॥
तादिन की यह कथा सुनाऊँ। जो मानो तो कहि समझाऊँ ॥
समुझि करो अपने मन माहीं। वह तो अकथ कहन की नाहीं ॥
जो कहों तो कौन पतियायी। देखी सुनि नहिं वेदन गायी ॥

हंस गति पाये नहिं कोई। मोर संदेश मानै नाहिं सोई ॥
ताते गये विगोइ विगोई। नहिं मानै दुख पायो सोई ॥
सत्य शब्द मैं कहौं बखाना। बूझ होय तो बूझो ज्ञाना ॥
साखी-बूझ करो हनुमत तुम, हौ तुम हंस स्वरूप ॥
राम राम कह करत हौ, परे तिमिर के कूप ॥
राम राम तुम कहत हौ, नहिं सो अकथ सरूप ॥
वह तो आये जगतमें, भये दशरथ घर भूप ॥
अगम अथाह तुमसों कहौं, सुनि लो अगम विचार ॥
उत्पत्ति परलय तहँ नहीं, साहब सिरजन हार ॥

चौपाई।

सुनो हनुमत यह कथा नियारी। तब नहिं हती सो आदि कुमारी ॥
जाते भयी सकल बिस्तारी। सो नहिं होती रचने हारी ॥
आदि भवानी सो महमाया। ताकी रचना हती न काया ॥
नहीं निरञ्जन की उत्पति कीन्हा। समरथ का घर काहु न चीन्हा ॥
तब नहिं ब्रह्माविष्णु महेशा। अगम ठौर समरथ को देशा ॥
तब नहिं चन्द्र सूर्य्य औ तारा। तब नहिं अंध कूप उजियारा ॥
तब नहिं सात सुमेरु औ पानी। समरथ की गति काहु न जानी ॥
तब नहिं धरणि पवन आकाशा। तब नहिं सात समुद्र प्रकाशा ॥
पांच तत्त्व तीन गुण नाहीं। नाहीं तहाँ और कछु माहीं ॥
दश दिगपाल लखै नहिं लेखा। गम्य अगम्य काहू नहिं देखा ॥
दशो दिशा इन रचना रांची। वेद पुराण गीता इन बांची ॥
मूल डाल वृक्ष नहिं छाया। उत्पति परलय हती नहिं माया ॥
तब समरथ हते आपु अकेला। धरम माया नहिं मनको मेला ॥
विन सतगुरु को ठौर लखावे। भूली राह कौन समुझावे ॥
साखी-हनुमत यह सब बूझिकै, करो आपनो काज ॥
निर्भय पद को पाइकै, होय अभय सो राज ॥

हनुमान वचन-चौपाई ।

सुनो मुनीन्दर वचन हमारा । हम नहिं जानै भेद तुम्हारा ॥
कहौं प्रतीति कौन विधि आवै । कैसेके यह मन पतियावै ॥
यह प्रतीति कौनो विधि आयी । तब हम जानि करब सेवकायी ॥
जहँ समरथ तहां हम जावैं । तबही हमरा मन पतियावै ॥
उहाँ जाइ इहाँ फिरि आऊँ । तब मैं मन परतीति लगाऊँ ॥
जो तुम सत्य सत्य कहि भाखी । तो मोको दिखलाओ आँखी ॥
करौं प्रतीति गहौं तुव शरणा । बारम्बार बंदौं तुव चरणा ॥
जो गहि तुम दिखावो मोको । तबही झूठ न जानौं तोको ॥
साखी-सुनो मुनिन्दर मोरि गति, बिन देखे नाहिं पति आउँ ॥
आदि सृष्टिकी तुम कहत हौ, तहाँ कौन विधि जाउँ ॥

मुनींद्र वचन-चौपाई ।

जब ऐसो कह्यो हनुमाना । उठे मुनीन्द्र मन माहीं जाना ॥
उठते देखा फिरि नहिं देखा । देह विदेह भये अवरेखा ॥
पवन रूप होइ गये अकासा । बैठे पुरुष विदेही पासा ॥
चहुँदिशि देखे हनुमत वीरा । कौन सूरति को भयो शरीरा ॥
गैल माहि चले पगधारी । परम प्राण तहँ लगी खुमारी ॥
देखत चन्द्र वरण उजियारा । अमृत फलका करे अहारा ॥
असंख्य भानु पुरुष उजियारा । कोटिन भानु रोम छबि भारा ॥
देखा चारों दिशा सब झारी । पता न पाय रहे जब हारी ॥
तब हनुमत हाँक तहँ मारी । तुम मुनीन्द्र अहौ सुखकारी ॥
अब प्रकट होइके दर्शन दीजे । तुम्हरी विरह मम हिरदय भीजे ॥
साखी-भये विदेही देहधरि, आये हनुमत पास ॥
और वरन अरु भेषही, सत्य पुरुष परकाश ॥

चौपाई ।

तब हनुमत सत्य कै मानी । सही मुनीन्द्र सत्य हौ ज्ञानी ॥
अबतुम पुरुष मोहि दिखाओ । मेरा मन तुमते पतियाओ ॥
अगली कथा कहौ कछु मोही । कौन नाम तुम्हारा होही ॥
कैसी विधि समरथ को जाना । सो कछु मोहिं सुनाओ ज्ञाना॥
बचन तुम्हारो है परमाना । कहु अब समरथ कौन अस्थाना॥
निज गुरज्ञान आपन मुहिदीजै । दास आपनो मुहि करि लीजै॥
साखी—समरथ को अस्थान अब, मोको देहु बताय ॥
कौन जगत वह रहत है,सो मुनि कहु समझाय ॥

मुनींद्र बचन-चौपाई ।

करि परतीति मानो हनुमाना । बल पौरुष मोरा तुम जाना ॥
नहिं जानो तो और जनाऊँ । समरथ को अस्थान बताऊँ ॥
योगजीत मोरा है नाऊँ । होय ज्ञानी मैं जगमें आऊँ ॥
दोऊ नाम लोक के भाई । देह धारि जग करौं लखाई ॥
तादिन को अब कहौं संदेशा । जब मैं हतो समरथ के देशा ॥
एक बार फेरि सुनो हमारी । समरथकी गति कहौं विचारी ॥
पहिले भये निरञ्जन राया । फिरिके ध्यान पुरुष उपजाया ॥
फिरि तब भयी शक्ति भवानी । मेरो नाम धरयो तब ज्ञानी ॥
यह तो कथा बहुत है भारी । तुम अपने मन लेहु विचारी ॥
कछु संक्षेप सुनाओं तोहीं । निश्चय कै जो मानो मोहीं ॥
महमाया समरथ सो आयी । ताको धरम ग्रास्यो जायी ॥
लीलत कन्या कीन्ह पुकारा । समरथ मोरा करौ उबारा ॥
तब मोकहँ भयो हंकारा । योगजीत तुम करो उबारा ॥
मारो धर्मराय शिर फोरो । महाशक्ति को बन्धन छोरो ॥
महाशक्ति को बन्धन भारो । धर्मराय शिर काट जो डारो ॥
तबही तुरत तहाँ मैं आया । काट्यौ माथ कढी महमाया ॥

मोरे मन तब आयी दाया। अमी सींचि के फेर जिवाया ॥
धर्मराय समरथ के चोरा। सेवा करिके कीन्ह निहोरा ॥
काल नाम धर्मराय कहाया। जबते वह ग्रास्यो महमाया ॥
माया ब्रह्म दोऊ मिलि साजा। तासों तीन लोक उपराजा ॥
तीन पुत्र तिनकर सो भयऊ। तिन सब रचना सो करिलयऊ ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश बखाना। इन तीनों को सब जग जाना ॥
समरथ को कैसी विधि पावे। जाको तीन देव भरमावे ॥

हनुमान वचन।

सुनि हनुमत तब भये अधीना। अहो मुनीन्द्रहमतुमको चीना॥
सत्य प्रतीति भयी जिव मोरे। अब मैं तुमसे करौं निहोरे ॥
होय अधीन पूछत हौं स्वामी। सो मुहि कहिये अन्तर्यामी ॥

साधु लक्षण विषय प्रश्न।

साधु साधु संसार बखानै। कहौ साधु कैसी विधि जानै ॥
साधु बडे की महिमा बड भाई। साधु नाहि महिमा अधिकाई ॥
ऋषि मुनि सबही साधु बखानै। कहौ साधु कैसी विधि जानै ॥
सेवा साधु सब गोहरावें। कहो साधु कैसे लखि पावे ॥
कौन साधु सो मोसे कहना। साधु शरण मोहि निश्चय गहना॥
सोई साधु बताओ मोही। उठिके शीस नवाऊँ तोही ॥
तुम तो साधु साधु मत जानो। सोई दृढकरि मोरे मन आनो ॥
जो तुम कहौ साधु मैं सोई। इन्द्री साधन मोपहँ होई ॥

अथ-हनुमानजी कहते हैं कि, हे साहिब ! यदि आप कहो कि इन्द्रीजित पुरुष को साधु कहते हैं तो मैंने सब इन्द्रियोंको वशमें कर रक्खा है तो क्या मैं साधु हूँ ?

साधन चेते साधु कहाई। कै कोइ साधु और है भाई ॥
सो निश्चय मोहि कहो समझाई। मैं परतीति तुम्हारी पायी ॥

साखी-कहो मुनीन्द्र सत्य कै, कौन साधु जगमाहिं ॥
सो मोहि भेद बतावहु, अब कछु संशय नाहिं ॥

साधु लक्षण ।

मुनीन्द्रवचन-चौपाई ।

साधु महिमा सुनो हनुमाना । जाके संग पुरुष को जाना ॥
मोह मद सों निरसंशय भाई । सोई जग महँ साधु कहाई ॥
साधु पुरुष समरथ है सोई । राग द्वेष दुख सुख नहिं होई ॥
सोई लक्षण साधु कहावै । सोई साधु अगम घर पावै ॥
प्रथम इन्द्री मनही जीतै । पूरण ज्ञान कबहूँ नहिं रीतै ॥
तत्त्व प्रकृति अपरबल माया । इनको जीते साधु कहाया ॥
काम क्रोध लोभ हंकारा । सोइ साधु जिन ये सब मारा ॥
होना साधु सुगम नहिं भाई । साधु सरूप अति कठिनाई ॥
हार जीत मान न अपमाना । ऐसे रहित सो साधु निबाना ॥
शील संतोष दया कर भाऊ । क्षमा गरीबी साधु कहाऊ ॥
प्रेम प्रीति धीरज गुण खानी । सो है साधू निर्मल ज्ञानी ॥
हनुमान यहै साधु सुभाऊ । तुमही साधो साधु कहाऊ ॥
साधु लक्षन मैं तुमहिं सुनाया । ऋषिमुनि कोइ गम्यनहि पाया ॥
साधू महिमा है अति साँची । साधु वचन ते यमते बांची ॥
आदि अंत गति साधू जानो । सो साधू समरथ मन मानो ॥
सत्य सत्य साधु मन जाना । सो साधू को निर्मल ज्ञाना ॥
साधु बडे बडापन नहिं चाहे । साधुन की मति ऐसी आहे ॥
साधु समान कोऊ नहिं दूजा । जाको अगम निगम सब सूझा ॥
तनमन धन सब साधिहै जोई । जिन अपनी दुर्मति को खोई ॥
सोई साधु जग माहि कहावे । नहिं तो बहुत जगत रहावे ॥

साखी-सुनु हनुमत यह साधु गति, को करि सकै बखान ॥
जाको सत संगति भयी, सो कछु पायो जान ॥

हनुमान वचन-चौपाई।

सुनो मुनीन्द्र मोर यक बाता। कहां रहत हैं समरथ दाता॥
ताको नाम कहो निज जागा। अब मेरा मन तुमसों लागा॥
सकल भेद कहि दीजै मोही। मोरी सुरति लगी है सोही॥
तुमतो संत सकल सुख दायी। तुम्हरे है नहिं कछु मान बडायी॥
सत्य साधु सत्य मैं जाना। सत्य सत्य है तुम्हरो ज्ञाना॥
पूरण पद है ध्यान तुम्हारा। मैं अपने दिल कीन्ह विचारा॥
साखी-पूरण पद निज ध्यान है, सो मोहि देहु बताय॥
धम निरञ्जन तहाँ नहिं, काल दगा नहिं खाय॥

मुनीन्द्र वचन-चौपाई।

सुनो वीर हनुमान विचारा। कठिन विवेक खांडे की धारा॥
ताका तुम कीजो इतवारा। निश्चय कारज होय तुम्हारा॥
अब सन्देह रहै कछु नाहीं। साधु भये साधो मन काहीं॥
समरथ का तोहि नाम सुनाऊँ। सो युक्ती तोको दिखलाऊँ॥
सुनो हनुमंत खुशी मन आऊँ। ऐस अगम तोहि ठौर दिखाऊँ॥
साखी-अगम ठौर जेहि गम्यनहिं, तहां नहीं कोइ जाय॥
सुरति निरति यक घर धरो, हनुमत गहो तुम आय॥

हनुमान वचन-चौपाइ।

हे स्वामी यक संशय आयो। कौन भांति तहँ सुरति लगायो॥
कौन भांति मैं लागूँ धायी। सो तुम मोहि कहो समझायी॥
पौरुष बल सों लागो जाई। क्षण इक में जाओं तेहि ठाई॥
राह बाट तेहि मोहि बताओ। काया को सब भेद लखाओ॥
तुम समरथ समरथ को जाना। सो मोहि कहिये ठौर ठिकाना॥
जेतिक युक्ति तुम्हारे पासा। सोमोहिदिखलाओअगमतमासा॥

कहो शिताब[1]विलम्बनहिकरना । निश्चयके हम आयो शरना ॥
लै पहुँचाओ ठौर दिखलाओ । ऐसी वस्तु गहर जनि लाओ ॥
साखी–गहर न लाउ मुनीन्द्र तुम, हौ समरथ मतिधीर ॥
मैं सेवक निज दास हौं, अरपूँ सकल शरीर ॥

मुनीन्द्र वचन ।

धन हनुमत तुम्हारी वानी । तुम मोरी गति नीके जानी ॥
समरथ मिलत है दोय प्रकारा । भक्ति ज्ञानसे होइ उबारा ॥
तीसरि योग युक्ति है भाई । मुक्ति होय संदेह मिटाई ॥
तीन प्रकार है समरथ केरो । सो गभवास नहिं लेइ बसेरो ॥
जासों भक्ति जो होय सवेरा । पावे अगम ज्ञान सो टेरा ॥
तसगुरु केवल है निज ज्ञाना । सो विरले कोई साधुन जाना ॥
तीन गुप्त तीनों तोहि भाखा । परदा अन्तर कछू न राखा ॥
सो अपने मन करौ विचारा ।समरथ नाम सो पइहो सारा ॥
प्रथम भक्ति करो समरथ की । योग युक्ति ज्ञान सुनु नीकी ॥
निष्कपटी होयके साधुमनाओ । साधुन के चरणों चित लाओ ॥
जो साधू अपने धर्म रहाओ । सेवो ताहि परदा नहिं लाओ ॥
ऐसी भक्ति जेही मन भावे । भवसागर को भर्म मिटावे ॥
साधु कहै सो राह गहि लीजे । साधु कहै सोई पुनि कीजे ॥
सुनु हनुमंत कहौं जो वानी । कूर्म वायु सो अनुभव ज्ञानी ॥
नाग वायु धरि वास समानी । तामें अमी अंक जल पानी ॥
अमी मांहि यकबेलि उपजायी । तासों नाग वेलि चलि आयी ॥
पान सोई सन्धि राखे भाई । समरथ मुख ऐसी फरमायी ॥
पुनि समरथ ऐसी अर्थायी । पान जाहि तुम देहौ जायी ॥
सो हंसा हमरे घर अइहैं । अभय अशंक सदा सुख पइहैं ॥

---

१ जल्दी, शीघ्र ।

तिनुका तोरि करो जिव कोरा। छूटै काल मिटै झकझोरा ॥
चौका आरति करि बिस्तारा। हनूमान तुम लेहु निरधारा ॥
समरथ हुकुम भक्ति यहि ठानी। जाते यम नहिं बांधै तानी ॥
बनि आवै तो करिये भाई। नातो लीजो पान बनाई ॥
साखी–यहि समरथ की भक्ति है, सुनो ज्ञान की रीति ॥
योग युक्ति निज भाषेऊँ, करौ सो निजकै प्रीति ॥

चौपाई।

अब तुम ज्ञान सुनो हनुमाना। समरथ को है निर्मल ज्ञाना ॥
निराधार आधार न कोई। पहुँचे साधु शूरमां सोई ॥
निर्गुण[1] सगुन ध्यान करिपावे। तहां सगुन निरंजन नहिं आवे ॥
अनुभव वाणी करे परकाशा। सो साधू मोर स्वाँस उस्वाँसा ॥
महाकठिन खाँडे की धारा। ऐसा निर्गुण ज्ञान हमारा ॥
निर्गुण सर्गुण दोनों नाहीं। है सो हंस नाम की छाहीं ॥
तीनों गुण ते सगुन सो होई। चौथा गुण निर्गुण है सोई ॥
निर्गुण सगुण दोऊ के पारा। शब्द अरु स्वास नहीं ओंकारा ॥
अदभुत ज्ञान विकट है भाई। विकट राह कोइ विरले पाई ॥
ज्ञान गहे विनु मुक्ति न होई। कोटिक लिखै पढै जो कोई ॥

---

१ इस चौपाईके तीन पाठ सब ग्रन्थोंमें अलग २ मिलते हैं। एक तो यही है, दूसरा पाठ यह है।

निर्गुण ज्ञान ध्यान धरि आवे। तहँ कोइ सगुण नजर नहिं आवे ॥
तीसरा पाठ यह है।

निर्गुण ध्यान धरे जो पावे। निर्गुण सगुण नजर ना आवे ॥
इसी प्रकारसे अनेक प्रतियोंमें अनेक मत भेद हैं कहाँ तक कहा जाय। पश्चात्के लेखक महाशयों की कृपासे न मालूम कबीरपंथी साहित्यमें क्या २ फेर हुआहै और होता जाता है ॥

साखी—भक्ति ज्ञान तुमसों कह्यो, सुनि लो योग अपार॥
रोम रोम को गुण कहूँ, काया का विस्तार॥

चौपाई।

काया है यह समरथ केरी। काया की गति काहु न हेरी॥
शिव गोरख जो योग कमाया। काया को ओर छोर नहिं पाया॥
कौन गुननसे ठाढी काया। कौन सुरति कौन है माया॥
कुंज गली सुनो हनुमाना। यह निज भेद काहु नहिं जाना॥
सोई भेद कहौं तुम पाहीं। सुनिके तुम समझो मन माहीं॥
बडे बडाई सब पचिहारे। यह निज भेद है अगम अपारे॥
समरथ सागर समरथ बासा। तासों उपजी समरथ स्वासा॥
स्वासा अन्तर बोले जो बानी। अमी बुन्द ढरके यक जानी॥
तासों बीज भये अंकूरा। काया कारण सब भरपूरा॥
सोई वीज धर्मराय जो पाया। शक्ति एक धरि जामन लाया॥
सो वह शक्ति रक्त की मूला। तासो भयो बीज अस्थूला॥
काया की गति अगम अपारा। हनुमत ताको तुम करो विचारा॥
तीन लोक जाहिर है भाई। सो सब काया भीतर आई॥
सो कायाका करो विचारा। हनुमत सो तुम करो निरधारा॥
अष्ट चक्र कमल है आठा। लागे बन्ध तीनसै साठा॥
नौ नाडी है बहत्तर कोठा। अन्तर पट संपुट सो घोठा॥
परम सुमेरु है दश दरवाजा। पाँच तत्त्व तीन गुण छाजा॥
चन्द्र सूर वहाँ दोउ विराजैं। इंगला पिंगला सुखमनि साजैं॥
समुन्दर सात काया के माहीं। नौसौ नदी बहे तिहि ठाहीं॥
दशौ दिशा काया के भीतर। यही देवल सब देव अरु पीतर॥
यहि काया वैराट स्वरूपा। ज्योति स्वरूप वसत है भूपा॥
निरंजन है काया के माही। ओम ओंकार मायाकी छाही॥

ररंकार गरज ब्रह्मण्डा । सप्त द्वीप परगटे नौखण्डा ॥
समरथ अंश बसे अस्थीरा । अस्थिर बस्तु बसैं घर धीरा ॥
ताको कोई चीन्हे नाहीं । ताते सब जग मरि मरि जाहीं ॥
साखी—कायाके गुण अगम हैं. सुनु तुम हनुमत वीर ॥
नहिं काहूको लखि परे, अटपट रचा शरीर ॥

हनुमान वचन—चौपाई ।

अहोस्वामी मैं सब विधिजानी। तुमही समरथ तुमही ज्ञानी ॥
कहा अस्तुति तुम्हारी कीजे । अमृत बचन सुनि हम भीजे ॥
सब संदेह मिटायो मोरा ।जनमजनमका मिटयोझकझोरा॥
सुखसागर अमर घर चीन्हा । भले सतगुरु मोहि दर्शन दीना॥
साखी—दर्शन देई मुनीन्द्र तुम, मोको किया सनाथ ॥
भौ सागर से लै चले, केश पकडि गहि हाथ ॥
हनूमान आधीन है, लीन्हो सहज को पान ॥
जब मुनीन्द्र शिष्यकिये,दे समरथ को ज्ञान ॥ * ॥
खण्ड ब्रह्माण्ड पार के पारा । तहँ समरथ को घर तत सारा ॥
निर्भय घर है तहां सो भाई । रोग न व्यापे काल न खाई ॥
ताका तुम जो सुनो विचारा । समरथ का घर है सबके पारा ॥
सब के पार रहे निरधारा । पिंड ब्रह्माण्ड ताके आधारा ॥
सो समरथ है सबसो न्यारी । सुनु हनुमत तुम लेहु विचारी ॥

---

* पुरानी प्रतियोंमें यह पुस्तक इसी साखी तक समाप्त हो गई है किन्तु १९१३ सम्बत् वाली प्रतिमें और भी अधिक है सो इस साखी के आगे से आरम्भ होकर अंत तक है।
इतना ही नहीं बहुत पुरानी प्रतियों में आदि में "सेतु बन्ध में जायके, देखा हनुमत बीर" सेही पुस्तक आरम्भ भी होतीहै किन्तु उस साखी के ऊपर की चौपाई नवीन प्रतियों में पायी जाती है, और उससे कोई किसी प्रकार का बिगाड नहीं होता इस कारण उसे भी लिख दिया है ।

अक्षर सो निःअक्षर है न्यारा। ओम ओंकार ताहि आधारा॥
तीनो गुणका जो बिस्तारा। रंकार है सब के पारा॥
ताके परे निःअक्षर धारा। सोई भेद निज आहि हमारा॥
ये सब. हैं समरथ आधारा। समरथ शक्ति को वार न पारा॥
ताकी आश करे जो कोई। उतरें पार भौ सागर सोई॥

हनुमत कहे साहिब सुनो, तुम हो दीन दयाल॥
तुम समान रघुपति नहीं, काट्यो यमको जाल॥

कबीर वचन–चौपाई।

कहे कबीर सुनो धर्मदासा। वही ज्ञान मैं तुम्हे प्रकाशा॥
हनुमत अंश पुरुष का होई। तब हम उनको मिलिया सोई॥
हनुमत बोधि चले हम जबहीं। चतुर्भुज के ढिग पहुँचे तबहीं॥
उनसे कीना ज्ञान विचारा। वह हँसनका है सरदारा॥
चतुर्भुजको हम दियो गुरु आई। ताहि बनायो दर्भंगा राई॥
जो कोइ तुम्हारा बीरा पावे। सो हंसा सतलोक सिधावे॥
इतनी कहिके हम काशी आये। चलत चलत कछुवारनहिलाये॥
काशी बिद्या गुरु बहुतोई। पण्डित ज्ञानी बहुते होई॥
धर्मदास तुम वंश हमारा। तुम्हरे काज हम यहां पगु धारा॥
तुम्हरे हाथ पान जो पावे। बहुरि न योनी संकट आवे॥

साखी–कहे कबीर धर्मदास सों, हनुमत बोध्यो जाय॥
पान परवाना देइके, तुमको मिलिया आय॥
धर्मदास वन्दन करे, धनधन हो सत्यकबीर॥
हनुमतको दर्शन दिये, धनहैं हनुमत बीर॥

छन्द–धन्य साहिब धन्य हो तुम दर्शन दीनो आइकें॥
कीजे दया अब दासपै, जाऊँ चरण लागु धाइके॥

वीर हनुमान बोधि के ले दिया पान प्रसाद हो ॥
शेष शारद विष्णु नारद नाहि न पावें आदि हो ॥
सोरठा—नाहि पावें न आदि, शिव ब्रह्मा अरु नारद ॥
तुम्हरो वदन निहारि, धर्मदास वन्दन करे ॥

इति श्रीबोधसागरान्तर्गतकवीरधर्मदाससम्बादे
हनुमानबोधवर्णनो नाम सप्तमस्तरंगः ।

सारविचारपचीसी ।
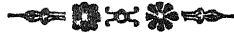
साखी—ब्रह्मादि सनकादि लै, मुनिवर आदि प्रयन्त ॥
बिन गुरु मोह निशा शयन, सुख सपने न लहन्त ॥ १ ॥
गुरुके गुण गावे सभी, सत्य सही विनु लक्ष ॥
माया के उपदेश अज, हरिहर काल के भक्ष ॥ २ ॥
कर्म धर्म मति तीनि लैं, अज हरिहर समुदाय ॥
गावहिं ध्यावहिं ताहि कह, जेहि सब जीव नशाय ॥ ३ ॥
कहने को चूके नहीं, जेती जिसकी दौर ॥
सबै शब्द सहिदान है परख शब्द सो ठौर ॥ ४ ॥
वही प्रमाण सबन मिलि कीन्हा, ज्यों अंधरे की हाथी ॥
आदि बाप कौ मरन जानै, पूत होत नहि साखी ॥ ५ ॥
अंधरे को हाथी सांच है, साचे है सगरे ॥
हाथन की टोई कहैं, आंखिन के अँधरे ॥ ६ ॥
शब्दातीत शब्द ते पाइन, बूझे विरला कोइ ॥
कहैं कवीर सतगुरु की सैना, आप मिटै तब ओइ ॥ ७ ॥
जिव दुखी चाहे छुटन, चीन्हे नाहीं काल ॥
आसा देवे निवृति का, भोरे भवके जाल ॥ ८ ॥

तामस केरे तीन गुण, भौंर लेइ तहँ वास ॥
एकै डारी तीन फल, भाँटा ऊख कपास ॥ ९ ॥
जीव फँसे तेहि जाल में, सूझे वार न पार ॥
त्राहि त्राहि निशिदिनकरे, साहब लेहु उबार ॥ १० ॥
साहब को जाने नहीं, हाकिम चोर प्रचण्ड ॥
यह ठाकुर यम देशमें, खण्डपिण्ड ब्रह्माण्ड ॥ ११ ॥
नित उपजे नित खपे, निश्चय नष्ट सो मूल ॥
परखहु काल कला सबै, देखि जगत मत भूल ॥ १२ ॥
झिलमिल झगरा झूलते, बाकी छुटीन काहु ॥
गोरख अटके काल पुर, कौन कहावे साहु ॥ १३ ॥
बिनु पारख वाणी सुने, धावे ताके साथ ॥
घायल अनेकन भावसो, तजहिं न पीटहिं माथ ॥ १४ ॥
बहु कर्महिं अरुझाइ जिव, डोरी अपने हाथ ॥
नाच नचावे यम सदा, कारण कारज साथ ॥ १५ ॥
चहहिं जो निस्तरन को, इन कर्मन छुटकाय॥
तेहि तिहुँ फाँस लै धावहीं, बंदी देहि दृढाय ॥ १६ ॥
करम कमाई सबन पर, राज दाम परमान ॥
जन्मत मरत न छोड़ई, विविधि कर्म की खान ॥ १७ ॥
बन्दी खाना जो पडे, जेहि राजा खुशियाल ॥
लोभ गरासे जीव को, सुझे नहीं भवजाल ॥ १८ ॥
जहर जमी दै रोपिया, अमी सींचै सौबार ॥
कबीर खुलुक ना तजै, जामें जौन विचार ॥ १९ ॥
इन्द्द आखिन पथरा दिये, समझ दिये भ्रमजाल ॥
क्षण क्षण जीवन जीवके, भोगे काल कराल ॥ २० ॥

१ स्वभाव, प्रकृति ।

मूल बिलाई एक सँग, कहु कैसे रहिजाय ॥
अचरज यक देखो संतो, हसती सिंहहि खाय ॥ २१ ॥
पूरण पिण्ड ब्रह्माण्ड सो, त्रिगुण फांस लगाय ॥
नाशक नाशे जीवको, आपे आप कहाय ॥ २२ ॥
वन्दी छोड छुडावई, मेटि मेटि यम फांस ॥
धन्य धन्य सो जीव हैं, तजहिं महा भोगांस ॥ २३ ॥
प्रभु शरणागति परख दृढ, सत्य लोक परमान ॥
संसत जीव विलास है, टूटा काल गुमान ॥ २४ ॥
पारख सीढी झाँकिके, उलटि बहै भवधार ॥
थाह न पावहिं बूडहीं, हौ ताके निस्तार ॥ २५ ॥

इति

इति

श्रीबोधसागरान्तर्गत

ग्रन्थ हनुमानबोध

समाप्त ।

भारतपथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संशोधित ।

श्री-लक्ष्मणबोध ।

खेमराज श्रीकृष्णदासने

मुम्बई

निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रकाशित किया ।

संवत् १९८०, शक १८४५.

श्री कवीर साहिव।

अष्टमस्तरंगः ।

ग्रन्थ लक्ष्मणबोध।

मंगलाचरण-दोहा ।

जय सुकृत जय मुनीन्द्र प्रभु, जय करुणामय ईश ॥
जय कबीर कलि दुख हरण, सदा नवाऊँ शीश ॥

उत्थानिका (धर्मदास वचन) ।

दोहा-विनय करत धर्मदास हैं, दोऊ कर को जोर ॥
लक्ष्मण बोध्यो काहि विधि, कहहु सो बन्दी छोर ॥

सत्य कबीर वचन ।

प्रथम सो सत्यनाम गुण गाऊँ । भक्त हेतु संसारहि आऊँ ॥
अनन्त बार आयो संसारा । देख्यो जमीं[1] खलक[2] मंझारा ॥
साधु संत देखों सब ठाऊँ । कतहुँ न देखों मुक्त का नाऊँ ॥
झुण्ड झुण्ड बहु देखौं विरागी । कथहिं ज्ञान अल्पै बुधिलागी ॥
तत्त्व शब्द सुने नहिं काऊ । कतहुँ न सुनी परे वहि गाऊ ॥
एक दिन चले द्वारका भाई । देह तजी जहां त्रिभुवन राई ॥
गढ रोके बलभद्र रहाये । बहुत चिंता तिन मन उपजाये ॥
कृष्ण देह नहिं दाग लगायी । तब सपने कृष्ण बात जनायी ॥

---

१ पृथ्वी । २ संसार ।

बलभद्र सो कहा समझायी । अगली बात सब दई बुझायी ॥
बलभद्र तुम भक्त हमारा । तुम से कहूँ मैं सत व्यवहारा ॥
हमरी सीख मानिकर लीजै । जो हम कहैं सोई अब कीजै ॥

बलभद्र वचन ।

कहै बलभद्र तुम साहब मेरा । हमतो जनम जनम का चेरा ॥
जो तुम कहो सोई मैं करिहों । मानि सिखापन शिर पर धरिहों ॥

श्रीकृष्ण वचन ।

जैसे कांचली सर्प तजाई । कांचलि रहे सर्प नहिं भाई ॥
याते तनको देहु जलायी । याहि राखी कछु फल नहिं आयी ॥
ठाट दहन तब तहवां भयऊ । जरत ठाट फफरा रहेऊ ॥
तब बोले अस गोविन्द राई । पेई[1] एक तुम बेगि बनाई ॥
मट्टी धरो पेइके माई । सो पेई तुम देहु बहाई ॥
पेई सोइ उडीसा जायी । बौद्धावतार की मांड मडायी ॥
ठाकुर कहा सो बलभद्दर कीना । एक पेई बनाय कर लीना ॥
ता पेई पर हीरा जड़िया । सो माटी पेई में धरिया ॥
समुद्र माहि दइ पेइ बहायी । सो पेई बहत उडीसा जायी ॥
तब राजा को सपना भयऊ । सपना में तेहि बात यक कहेऊ ॥

कृष्ण वचन ।

राजा सीख हमारा लीजै । बुद्धावतार कि थापन कीजै ॥

राजा वचन ।

राजा कहै कौन हो भाई । सो मोहि बात कहो समुझाई ॥

श्रीकृष्ण वचन ।

तब बोले सो गोविन्द राई । हम तो कृष्ण अहै रे भाई ॥
द्वापर बाचा सम्पूरण भयऊ । ताते ठाट हमहूँ तजि दयऊ ॥

---

१ पेटी, बाक्स, सन्दूक ।

अब कलियुग बैठेगा सोई। बौद्ध थापना हमरो होई ॥
जगन्नाथ मम नाम है सोई। हमरी थापना यहि विधि होई॥

सत्यकबीर वचन।

राजा जब स्नान को गयऊ। पेई गडी रेत में पयऊ ॥
तब राजा परिकरमा दीना। पेई उठाय के शिर पर लीना ॥
तुरतहि राज महल ले आवा। तबहि रानि कहँ तुरत बतावा ॥
करै निछावर मगल गावैं। घर घर नगर में बाजु बधावैं ॥
राजा ब्राह्मण लीन बुलायी। सपने की सब बात सुनाई ॥

ब्राह्मण बचन।

ब्राह्मण कहै सुनो महराजा। सुफल जनम सरिहैं सब काजा ॥
शुभ नक्षत्र वार धरि लीजे। तब देवल की थापना कीजे ॥
रोहिणी नक्षत्र वार बुध लीना। तब देवल की नीव जो दीना ॥
जब देवल सम्पूरण भयऊ। तबही राजा जग मंडयऊ ॥

पुरातन वार्ता।

मथन उदधि विष्णु जब कीन्हा। निकसीवस्तु बांटि सो लीना ॥
और त्रेता में बांध बंधाये। ताको बैर उदधि मन लाये ॥

उदधि विचार।

तबका बैर अबहीं मैं लेऊँ। देवल गाडि रेतमें देऊँ ॥

सत्य कबीर बचन।

लगन मुहूरत पहुँचे आयी। तबही देवल गाडि के जायी ॥
छैबार देवल गाड्यो भायी। तब हम हतो जगत के माही ॥
पूर्विल कौल सुरति धरि लीना। जाय आसन समुद्र पर कीना ॥
उदधि साजि दल जबही आवा। तब हम डाट समुद्र बतावा ॥
तब हंकार समुद्र बतावा। महा क्रोध करि हम पै आवा ॥
तब करि क्रोध समुद्र ललकारा। महाफटकार समुद्र फटकारा ॥

तबही पृथ्वी फाटि सो गयऊ । धसी समुद्र पताले गयऊ ॥
तबही खबर लक्ष्मी पाई । बैठा साधु समुद्र के ठाई ॥
तब लक्ष्मी आपे चलि आयी । तब हम शोभा कर्म बनायी ॥
लक्ष्मी कीन दण्डवत आयी । धसाइ समुद्र पताल पठाई ॥

लक्ष्मी वचन ।

तब लक्ष्मी संतन सों कहेऊ । महाप्रसाद तुम जगको लेऊ ॥

संतवचन ।

संत कहे सुन लक्ष्मी आई । नेवता देहु कवीरहि जाई ॥

सत्यकवीरवचन ।

तबहीं लक्ष्मी हम पै आयी । आइके कहै हमहि गोहरायी ॥
तबहीं संत कहैं सुनु माई । बैठे कवीरा परले ठाई ॥
तब लक्ष्मीध्यानपुरुषकाकीना । करमी सभा मोटि सब दीना ॥

लक्ष्मी वचन ।

तबही हमसों बात जनायी । तुम करो प्रसाद जगतके मायी ॥

सत्यकवीर वचन ।

तव हम कहा बात समुझायी । हम तो प्रसाद पुरुष को पायी ॥

लक्ष्मी वचन ।

लक्ष्मी कहै तुम कौन हो भाई । तुम कैसे गम पुरुषको पाई ॥

सत्यकवीर वचन ।

कहै कवीर सुनु लक्ष्मी आई । हम तो सेवें पुरुष को पाई ॥
जिन साहिव तुमको कीन्हा । साहिव पति तुम तनको दीन्हा ॥
तुम तो गरब भुलानी सोई । ताते काज सिद्ध नहिं होई ॥
श्याम देह कीना तुम सोई । तब ते तुमरी मुक्ति न होई ॥

लक्ष्मीवचन ।

तब लक्ष्मी कहे समझायी । तुम कहो सो हम मानें भाई ॥

सत्यकबीर वचन ।

बावन अटका जगन्नाथ चढाओ । चार अटका समरथ अरपाओ ॥
तब हम न्योते तुमरे आवैं । जब तुम सेवो पुरुष के पावैं ॥
सुनत लक्ष्मी ठाकुरपहँ आयी । जो कुछ सुनी सुकहि समझायी ॥

लक्ष्मी वचन ।

भक्त कबीर नाम जो आहीं । सो तो बैठे समुद्र की ठाहीं ॥
जब उन डांट समुद्र बताया । तबहीं समुद्र पताल समाया ॥
तब हम न्योत कबीरहि दीना । तब कबीर हमसों छल कीना ॥
करमी सभा बनाय सो लीन्हा । तब हम ध्यान पुरुषका कीन्हा ॥
मिटिगयी सभा कबीरयकरहेऊ । तब कबीर ऐसो पुनि कहेऊ ॥
जिन साहबने तुमको कीन्हा । काहे विसार तुम उनको दीन्हा ॥
तुम तो गर्व भुलाने सोई । ताते कार्य्य सधन नहिं होई ॥
छप्पन अटका जगन्नाथ चढाये । सत समरथ को धरे विसराये ॥
कहा करूँ प्रसाद तुम्हारा । हमको समरथ देवन हारा ॥
हम विन्ती सतगुरु सों कीन्हा । तब सतगुरू सिखापन दीन्हा ॥
बावन अटका जगन्नाथ चढाओ । चार अटकासमरथको अरपाओ
तब हम न्योते तुम्हरे आवैं । हमतो अंश पुरुष के भावैं ॥
उनकी गति मति लखी न जायी । तुम त्रिगुण होय सृष्टि बनायी ॥
हम सतगुरु होय जिव मुकतावैं । हम तो सेवैं पुरुष के पावैं ॥
तुम त्रिगुग का राज कराई । तब बोले गोविन्दे राई ॥

श्रीकृष्ण वचन ।

ज्योति अंश से हमरी उत्पानी । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर जानी ॥

लक्ष्मीवचन ।

तब लक्ष्मी कहै समुझायी । वहतो ज्योति हमारी आयी ॥
तुमको तो हम उत्पन कीन्हा । चारि स्वरूप हमहिं रचि दीन्हा ॥
त्रिगुण स्वरूप जो सृष्टि बनायी । चौथे अंश ज्योति थपायी ॥

सत्यकबीर-वचन ।

तब ठाकुर मन चकित भयऊ । सुनत बात गरब गलि गयऊ ॥
तब गोविन्द आपुचलि आये । तब कबीर उठि मिले जो धाये ॥
लक्ष्मी गोविन्द कबीर बैठाये । तब गोविन्द एक बात सुनाये ॥

गोविन्द वचन ।

हमतोगतिमति तुमरि न पायी । हमको लक्ष्मी अब समझायी ॥
साखी-जो तुम अंश पुरुष के, सतगुरु हौ तुम सोइ ॥
देवल गाडे रेत में, ताहि वन्द करि लेइ ॥

चौपाई ।

जबहिं उदधिदल सजिकेआया । तबहिं कबीर पुकार जनाया ॥
घसि समुद्र पाताले गयऊ । देखत गोविंद चकित भयऊ ॥
तब विन्ती सतगुरु सों कीन्हा । दोयकर जोरिलक्ष्मी आधीना ॥
चलो कबीर यज्ञमें पग धारो । तुमते शोभा रही हमारो ॥

सत्यकबीर वचन ।

छप्पन भोग चढाओ जायी । सत्य समरथ को भोग लगायी ॥
तब तुम हमको देखो जाओ । अरध प्रसाद रखा जब पाओ ॥
तब गोविंद स्थान उठिआये । जाइ उपदेश राजहि सुनाये ॥
छप्पन भोग चढाओ जायी । सत्य समरथ को भोग लगायी ॥
राजा पंडा कहै बुझायी । छप्पन भोग चढावहु जायी ॥
सो समरथ को भोग लगायी । तब तुम पावो प्रसाद अघायी ॥
आधा प्रसाद ऋषी जब पाई । तब तुम हमको दिखाओ भाई
हारि समुद्र तब ब्राह्मण भयऊ । हाथ जोरिके ठाढे रहेऊ ॥

समुद्र वचन ।

कौन हौ भाइ कहां ते आये । वस्ती छोडि यहँ कस बैठाये ॥
यहां तो लहर समुद्रकि आई । जाओ यज्ञमें भोजन पाई ॥

सत्यकबीर वचन ।

तबहि कबीर कहे समुझायी । तुम समुद्र कस बरण छिपायी ॥

समुद्र वचन ।

तब समुद्र अस वचन सुनाई । कहा है नाम तुम्हारो भाई ॥

सत्यकबीर वचन ।

हम तो अंश पुरुष सरदारा । भक्त कबीर है नाम हमारा ॥

समुद्र वचन ।

तब समुद्र बोले ऐसी वानी । हमतो हार तुमहिं से मानी ॥
हमरो मंथन जब इन कीया । बड़ दुख तब इन हमको दीया ॥
और त्रेता में पैज बंधाई । तबका बैर हमको साले भाई ॥
तुम तो सतगुरु होहु सहाई । तुमते हमार कछू न बसाई ॥

सत्यकबीर वचन ।

तब समुद्र को हम समझायो । निर्धन को चोर कहा लै जायी ॥
सब जग साख तुम्हारी देई । तुम दाता हम भिक्षुक होई ॥
इतनी दया तुम हमपर कीजो । बोली करी कथा सुनि लीजो ॥
इनको टहल शीश जो दीना । तापर दुष्ट दगा जो कीना ॥
त्रिया हरण इनकी जो भयऊ । जब इन बनहि बसेरा लियऊ ॥
राम लक्ष्मण हनुमान मिलायी । तब तिन मति असकीन बनायी ॥
सागरबाँधनका मता जो कीना । मच्छरूप तुमही धरि लीना ॥
तब तुम लागि उन के ठगिरहेऊ । करि विश्वास बहुतै दुख सहेऊ ॥
यह अपने मन गरब भुलाना । हमरे नाम सो शिला तराना ॥
राम नाम जब अंक चढावा । धरे पैर जब लीन बुवावा ॥
देखत राम तब चकित भयऊ । तबही शीश धूनि कर रहेऊ ॥
अतिहिं शोच करे बल वीरा । शीश डुलावे सागर तीरा ॥
जलमें जतु देख्यो बड भारी । यह तो झूठी पैज हमारी ॥

तेहि अति दुःखित जबहम देखा। तब हम पृथ्वी ओर अवरेखा ॥
चहुं फेर बना कंचन का कोटा। ता विच बैठा रावन खोटा॥
लक्ष्मण इन्द्रीजीत कहावैं। हम चेतावन ताको जावैं॥
प्रथमै हम रावण गढ गयऊ। तब हम तपसी वेष धरयऊ॥
जब हम रावन सों बात जनाई। वह काढे खडग हम पर भाई॥
तब हम आडा तृण जो दीना। घाव अठारह तृण पर कीना॥
कटे न तृण खिसियाना भयऊ। जाय घाव खम्भ पर कियऊ॥
कटि गया खम्भ भया दो भागा। सो मंदोदरि दृष्टिहि लागा॥
तृण के ओट सो सृष्टि का करता। जग देखतही भूले समता॥
कहै मंदोदरि गहि ता पाई। गरब न छाडे रावन राई॥
तब हम चले ताहि बन गयऊ। लक्ष्मण राम दोऊ जहँ रहेऊ॥
देखत लक्ष्मण धायके आया। आवतही अस वचन सुनाया॥

लक्ष्मण वचन।

कहे लक्ष्मण सुनो ऋषिराई। पिता हुकुम मेटो नहिं जाई॥
भरत दे राज राम बन अयऊ। तापर दुष्ट दगा जो कियऊ॥
सीता हरी रावन तेहि ठाऊँ। मैं तो शरण तुम्हारे आऊँ॥

सत्यकबीर वचन।

लक्ष्मण देखि भयी मोहि दाया। अचिंत नाम हम ताहिं सुनाया॥
अचिंत नाम का किया विवेका। गिरिपर लिखी सत्यका रेखा॥
काष्ठ समान सो गिरिवर तारी। उतारि सेना सकल भयि पारी॥
तबही राम लक्ष्मण फरमावा। हमको मुन्दरी आनि चढावा॥

मुनीन्द्र वचन।

तब कहैं मुनीन्द्र सुनो रघुराई। मुन्दरी धरो कमण्डल माई॥
तबहि रामजी आप सिधाये। मुन्दरी डारि ऋषी पै आये॥
तब मुनीन्द्र यह बात सुनाई। लाओ मुद्रिका दिखाओ भाई॥
देखि कमण्डल चकृत भये भाई। सोचे राम अपने मन माई॥

रामचन्द्र वचन ।

अकथ कथा कही नहिं जायी। कहो ऋषिराय बात समझायी॥
तुमतो धोखा बहुत उपजाये। ऐसी मुदरी कहां तुम पाये॥
सोई बात कहो समझायी। जाते संशय जीका जायी॥

मुनीन्द्र वचन ।

मुनीन्द्र बोल राम चित धरिया। एति बारतुम सृष्टि औतरिया॥
जिते आकाश में तारा ठयऊ। उते लंका में रावण भयऊ॥
साखी—नगर अयोध्या राय तुम, भये अनेकहिं बार॥
अपनी आदि भुलाइया, तुम कैसे करतार॥

रामचन्द्र वचन—चौपाई ।

रामचन्द्र कहे सुनो ऋषि राई। तुमरी गति मति कही न जाई॥
अजहुँ शिखापन हमको दीजे। जाते काज सिद्ध करि लीजै॥
काष्ठ समान गिरि पर्वत भारी। सेना उतरि सकल भइ पारी॥

सत्यकवीर वचन ।

पुरुषोत्तम परतीति बैठायी। ताते काज सिद्ध तब पायी॥
जाउ समुद्र तुम अपने ठाई। यहि गुनाह मोहि बखशो भाई॥
तुम दाता हम भिक्षुक तुम्हारे। तुमरी साख बडी संसारे॥
तुम छीलर न होउ बक्शो भाई। हम तो जाते यज्ञ के माही॥
अब तुम जाहू अपने ठाई। कञ्चन द्वारिका लेहु बुडाई॥
जगन्नाथ की महिमा होने दीजै। कञ्चन द्वारिका जलमें कीजै॥
मानि वचन गयो अपने ठाई। या विधि दीन समुद्रहलाई॥
इतना कहि हम ठाकुर परगयऊ। लक्ष्मी रु राय त्रिभुवन रहेऊ॥
छप्पन भोग चढै हैं द्वारा। लागा भोग ठौरहीं ठौरा॥
परोसै पण्डा बडी पकौरी। दाल भात और खीर मुंगौरी॥
बहु अचार गिनो नहिं जायी। छप्पन भोग परोसे आयी॥

ऋषीमुनी सब गरब भुलाये । तब हम एक कला दिखलाये ॥
ऋषी मुनी प्रसाद जब करहीं । जिततित पण्डा परसत फिरहीं॥
जहाँ तहाँ हम ठाढ रहाये । आदर भाव कछू नहिं पाये ॥
जब पण्डा कोइ देखै मोही । तबही वचन कहै अस सोही ॥
ऋषि मुनि जस प्रसाद करिलेई । ता पीछे तुमही धरि देई ॥
तब हमही अस चरित दिखावा । कबीर हो गयो ठावहिं ठावा ॥
पुरुष प्रताप अजर शरीरा । होय अन्तर बिच बैठु कबीरा ॥
जित देखैं तित दास कबीरा । भागे ऋषि समुद्र के तीरा ॥
भागे पण्डा दूर से भाई । किय अस्नान समुद्रै जाई ॥
जाय अस्नान समुद्रमें कीना । काय देखि तब भये मलीना ॥
गलित कोढ सबन को भयऊ । जायफिरियाद रायसोकियऊ ॥
वहाँ तो देखा एक शरीरा । यहाँ तो देखा सकल कबीरा ॥
ऐसा जादू चेटक कीना । सबका धर्म भ्रष्ट करि दीना ॥
तब राजा छडीदार पठवायो । दास कबीर को बेगि बुलायो ॥
करि सलाम छडीदार सिधाये । कबीर मिले द्वार के मायें ॥
आये कबीर राजाके ताई । तब राजा उठि टेके पाई ॥

राजा वचन ।

तबही राजा विन्ती कीना । हम तो सेवक सदा अधीना ॥
करहु दया दरद है देही । ब्राह्मण दुख पावत है तेही ॥

मुनीन्द्र वचन ।

बडा अपराध उन ब्राह्मण कीन्हा । अन्नदेवको दूषण दीन्हा ॥
अन्नदेव को रोष उपजी भाई । अन्नदेव मनावहु जाई ॥
ऊंच नीच गनो मति कोई । तब काया कंचन सी होई ॥
जगन्नाथ अयोनि अवतारा । उनका है सब सत्य व्यवहारा ॥
अन्नका छूत करे जनि कोई । करें तो निश्चय कोढी होई ॥

किनका किनका चुनि चुनि खायी । तबहीं कोढ दूर होय जायी ॥
तब[1] सब ब्राह्मण सो नाक घसायी । सबका कोढ तबै मिटि जायी ॥
जगन्नाथ का भाव तब भयऊ । राजा रानी मिलि सब गयऊ ॥
जब राजा को दर्शन भयऊ । जगन्नाथ यक बात जनयऊ ॥

जगन्नाथ वचन ।

मलयागिरि को काठ मँगाओ । ताकी मूरति बेगि बनाओ ॥
तब राजा जासूस पठाई । मलयागिरि को खोज करायी ॥
देखा जसूस फिरि नगर मँझारा । आइ राजाको कीन जुहारा ॥

जासूस वचन ।

अहो राजा चन्दन है यक ठाईं । लगे भुजंग देखे बहुताई ॥

तब राजा यह बुधि उपजाइ । सेना साथै लयी सिधायी ॥
जहाँ चन्दन तहाँ काष्ठ जगकीना । ताके समक्ष अग्नि सो दीना ॥
भयी प्रचण्ड अग्नि तेहि ठाहीं । जरे सर्प तब अगिन के माहीं ॥
काष्ठ चन्दन जबहीं ल आये । तब कारीगर तुरत बुलाये ॥

राजा वचन ।

बौद्ध औतारकी मूर्ति गढि देहू । हमसे गाम परगना लेहू ॥

कारीगर वचन ।

तब कारीगर बात जनावे । राजा सुनो बनै नहिं आवे ॥
देखी मूरति सब कोइ गढई । अन देखा काम कैसे बनई ॥
देवल काज हम चूक पराई । तो हम जरामूल से जायी ॥

---

१ पुरानी प्रति में इस चौपाई के आगे नीचे लिखे वचन नहीं हैं, किन्तु नवीन प्रतियों में हैं । किन्तु यह नवीन प्रतिका वचन कबीरपंथ के दोहा ग्रन्थों से भी नहीं मिलता ।

जगन्नाथ योनि बिन अवतारा । उनका है यह सत्य व्यवहारा ॥
उनकी भक्ती करै जो कोई । ताकी काया कोढ न होई ॥
साखी—जगन्नाथ को मात ले, हेत करी जो पाय । जो उनकी निन्दा करै, निश्चय नरकको जाय ॥

सत्यकबीर वचन।

ऐसी कहि अपने घर वह गयऊ। तब राजा मनमें सोचत भयऊ॥
जगन्नाथ की जो मूर्ति बनाई। गाम परगना तेहि देउँ लिखायी॥
तब लक्ष्मी हमसे विन्ती कीना। यहि शोभा तुमही भल दीना॥
देखी मूरति सब कोइ गढि देई। अनदेख सो कैसे करेई॥
जो तुम हमसे टहल कराओ। यही काम करो तुम आओ॥
हम पर भार जो सृष्टिका दीना। करो यह काम होहु ना भीना॥
हमको टहल सृष्टि का देहू। इतना कारज अपने शिर लेहू॥
लक्ष्मी विन्ती ऐसी लायी। नातो विरद तुम्हारी जायी॥
तब हम भेष सुतार का लीन्हा। बरस सौकी आयुर्दा कीन्हा॥
आये पौरि में ठाढ़ रहाये। पवरिया राज कहँ बचन सुनाये॥
राजा मैं तोहि देउँ बधाई। कारीगर आया पौरके माई॥
कांधे बसुला बोले लौ लीना। हाले गर्दन बोले झीना॥
राजा मनमें भयो अनन्दा। जैसे चकोर पायो निशि चन्दा॥
राज प्रधान पौरी में आयी। कारीगर से असकहै अर्थायी॥
जगन्नाथ की मूरति बनाओ। तौ तुम ग्राम परगना पाओ॥
देवल माहिं मूर्ति धरि दीजै। जो चाहो सो हमसे लीजै॥

कारीगर वचन।

हम तो गुरुमुख आहैं भाई। लोभ लालच नहिं हमरे ठाई॥
देवल काज सिद्ध करि दैहों। लालच चित में नहीं करैहों॥

सत्यकबीर वचन।

इतना सुनि राजापहँ गयऊ। राजा सुनि मन हर्षित भयऊ॥
तबही राजा महलमो जायी। रानीसों सब बात जनायी॥
तब मुक्ताहल सों थार भरायी। कारीगर को लीन बुलायी॥

कारीगर।

राजा कहा हमारा कीजै। सोलहदिनकी अवधी दीजै ॥
हमको साज मूरति का देओ। देवलको द्वार मूंदि कर लेओ ॥
जबही साज देवल लै जाऊ। तबहीं द्वार मूँदि हो भाऊ ॥
तबही कह्यो मूँदि पौरिहि दीजै। सब कोइ गमन यहां से कीजै ॥
सोलह दिनमें द्वार खुलै हो। तौ कछु विघ्न नहीं तुम पैहो ॥
देइ कपाट तब ताला दीना। चहुँ दिशि पण्डौं चौकी कीना ॥
दिनदश[1] सो बीति जब गयऊ। चलत फिरत गोरख तब अयऊ ॥

गोरख वचन।

गोरख कहे दर्शन मोहि दीजै। नहि तो शाप हमारो लीजै ॥

सत्यकबीर वचन।

तब पण्डा राजा पहँ जायी। राजा से सब बात सुनायी ॥
राजा पण्डा सों कहे बुझायी। कौन शाप गोरख केर उठायी ॥
तब पंडा गोरख पै आये। हाथ जोरिके विन्ती लाये ॥
दिनछः हम तुमसों मागे भाई। ता पाछे हम दरश कराई ॥

गोरख वचन।

साखी-मैं गोरख प्रसिद्ध हूँ, हमरे आड जनि होहु ॥
मोको दरश करावहू, कै शाप हमरो लेहु ॥

चौपाई

तब राजा गोरख पगु पडिया। बहु विन्ती भाव सों उच्चारिया ॥
जब गोरख नहि माने राई। तब राजा अस कह्यो बुझायी ॥

---

१ इस चौपाई में दश दिन के पश्चात् गोरखका आना बतलाया है किन्तु नवीन प्रतियोंमें सातही दिन लिखा है।

दिन सात वीत पुनि जाई। फिरत फिरत गोरख पुनि आई ॥

नवीन प्रतियोंमें सब ऐसेही वेनुकी वाणीका ऐसा गडबड हुआ हैकि सब यहांपर लिखना असम्भव है।

तब राजा कहे सुन गोरख आयी । जैसा तुम करिहो तैसा पायी ॥
नहिं माना गोरख द्वार उचारा । तब सतगुरु एक तला परचारा ॥
भागा गोरख दूर ते भाई । सतगुरु शरण सो बैठा जाई ॥
जगन्नाथ कहे सुनु गोरख आयी । योगी हमरो दरश न पाई ॥
यहि औगुन गोरख से भयऊ । ताते योगी दरश न पयऊ ॥
जगन्नाथ राजा सो कहेऊ । अवधिपूर नाहीं सो भयऊ ॥
ताते हाथ ठूंठ रहि जायी । दिन सोलह बीते नहिं पायी ॥
देह सम्पूरण होन न पायी । झगरू पण्डहिं को समझायी ॥
झगरू पण्डा शिष्य भयो आयी । केतिक दिन ऐसे बिति जायी ॥
तब जगन्नाथ सो भेट करायी । जगन्नाथ कह सुनो जी आयी ॥
तुम्हरी हमरी भली बनि आयी । तब हम तेहि कहा समुझायी ॥
कहैं कवीर सुनो त्रिभुवन राई । सिंघल द्वीप हम देखन जाई ॥
साखी-सिंघल द्वीप हम जावहीं, जगन्नाथ चित लाउ ॥
समुन्दर का भय मेटिके, अटल राज कराउ ॥

इति श्रीबोधसागरे कवीर धर्मदाससम्वादे जगन्नाथ-
स्थापनवर्णनो नाम सप्तमस्तरंगः ।

इति ग्रन्थ लक्ष्मणबोध ।

संक्षेप सार ।

और

ग्रन्थपर साधारण दृष्टि ।

यद्यपि इस ग्रन्थमें लक्ष्मणजीकोभी बोध करनेकेभी प्रसंग-से थोडी चर्चा आ गयी है किन्तु प्रधानतः इस ग्रन्थ में वर्णन जगन्नाथ की स्थापनाका है । इस जगन्नाथकी स्थापना के विषयमें भी अनेक ग्रन्थोंमें बहुत मत भेद हैं इसकारण और २ ग्रन्थोंकाभी इस विषयमें वर्णन थोडासा लिख देताहूँ ।

जब श्रीकृष्णजीका स्वधाम गमन हुआ तब बौद्धावतार हुआ। और जब जगन्नाथजीका अवतार हुवा उस समय उडीसा देशका राजा इन्द्रदमन था। उस राजा इन्द्रदमनको कृष्णजीने स्वप्न दिखलाया कि तू मेरा मन्दिर उठा। जगन्नाथजीकी आज्ञानुसार राजा मन्दिर बनाने लगा जब मन्दिर तैयार होगया तब समुद्र आया और मन्दिरको ढहाकर लेगया और भूमि बराबर कर गया। इसके उपरान्त फिर राजाने मन्दिर बनवाना आरंभ किया फिर उसकी वही दशा हुई। फिर बनवाया फिर वही दशा होगयी। इसप्रकार कईबेर राजाने मन्दिर बनवाने की इच्छा की पर समुद्रने उसको तैयार होने नहीं दिया। तब राजाने दुःखी होकर उस इमारतका बनवानाही छोड दिया। इस समय कबीर साहबने अपने वचनका स्मरण किया जैसा कि निरञ्जनगोष्टि आदि ग्रन्थोंमें लिखा कि, निरञ्जनने कबीर साहबसे निवेदन किया था कि जब मेरा जगन्नाथका अवतार होगा तब समुद्र मेरे मन्दिरको तोडेगा, उससमय आप कृपा करके समुद्रको हटादेवें और मेरे मंदिर को स्थापितकरादेवें तब आप वचनबद्ध हुए थे कि, मैं तुम्हारा मन्दिर स्थापित करा दूंगा और समुद्रको हटादूंगा। उसी वचनके अनुसार कबीर साहब उडीसा देशमें आन उतरे और राजा इन्द्रदमनके पास जाकर बोले, कि हे राजा! तुम जगन्नाथके मन्दिरको बनाओ। तब राजाने निवेदन किया कि, महाराज समुद्र मंदिरको बनाने नहीं देता मेरा कुछ वश नहीं चलता, जब मैं बनाता हूँ तब वह आकर ढहा जाता है मैं क्या करूं। कबीर साहेबने कहा कि राजा! मैं इसी प्रयोजनसे आया हूँ अब प्रसन्नतापूर्वक ठाकुर-

द्वारा बनवाओ मैं समुद्रको हटादूंगा और उसका कुछ वश नहीं चलेगा तब राजाने पुनः मन्दिरको बनावाना आरम्भ किया और मंदिर बनने लगा कबीर साहब समुद्र तटपर गये और एक चबूतरा बनाकर उसपर समुद्रकी ओर मुँह करके बैठ गये। उधर ठाकुरका मंदिर बनकर तैयारहोनेके समीप आगया और समुद्र-ने देखा कि अब तो ठाकुर का मंदिर बनगया तब बडे वेगसे दौड़ा और लहरें आकाशको उठीं । जब वह लहरें मारता कवीरके चौराके समीप पहुँचा तब सामने कवीर साहबको बैठे देखा देखतेही समुद्र ठहर गया और आगेको चरण बढा नहीं सका और ब्राह्मणका स्वरूप धरकर कवीर सहिबके पास आया और दंडवत प्रणाम करके निवेदन किया कि, हे महाराज ! मैं तो जगन्नाथके धोखेसे आया और मंदिर ढहाना चाहा । अब तो सामने आप बैठे हैं अब मुझ में यह सामर्थ्य नहीं है कि आगेको चरण बढा सकूं आप न्यायकर्ता हैं मेरा बदला दिलाओ । तब कवीर साहिबने कहा कि हे समुद्र ! मैं तुम्हारा बदला जानताहूँ । पर अब इस कलिकालमें जगन्नाथजीका माहात्म्य होगा तथा उनकी पूजा होवेगी इस कारण अब तुम ठाकुरका मंदिर उठनेदो और किसी प्रकारकी बाधा उपस्थित मत करो मैं तुमको इस मन्दिरके बदले द्वारकापुरी देता हूँ तुम जाकर उसको डुबालो । तब समुद्र प्रसन्नता पूर्वक वहांसे पीछे पलटा और द्वारकापुरीको डुबालिया और उधर जगन्नाथजीका मन्दिर बनकर पूरा हो चुका। समुद्रके हरिमन्दिर तोडनेका कारण यह था कि जब रामचन्द्र का अवतार हुवा था उस समय श्रीरामचन्द्रजीने समुद्रपर बला-त्कार कियाथा और सेतुबंधपुल बांधकर पार उतरेथे किन्तु समुद्र

रामअवतारमें और कृष्णावतार में भी बदला ले नहीं सका पर जगन्नाथके अवतार में अपना बदला लेने के निमित्त उद्यत हुवा और उसके बदले द्वारकापुरिको डुबा दिया। इससे यह सिद्ध होताहै कि किये का बदला अवश्य भोगना पडताहै। इस प्रकार जब ठाकुर का मन्दिर बनकर भली भांति प्रस्तुत होगया तब कृष्णजीने अपने पण्डाको स्वप्न दिखलाया कि हे पण्डे ! कवीर साहिवने मेरा मन्दिर स्थापित करदिया अब तुम लोग आकर मेरी पूजा करो। जब जगन्नाथजीने ऐसा स्वप्न दिखलाया तब पण्डा घरसे चलकर पहिले समुद्रतटपर आया और कवीरचौरे पर गया वहां कवीर साहबको बैठे देखा। उस समय सत्य गुरुका वेष जिन्दा साधुका था और वैष्णववेष नहीं था।इस कारण वह वेष देखकर उस ब्राह्मणने अपने मनमें अनुमान किया कि। प्रथम मैंने अशुभ दर्शन किया ठाकुर का दर्शन नहीं किया, ऐसा अनुमान करके वह पण्डा ठाकुर के मन्दिर में पहुँचा तब कवीर साहिबने उसके मनकी समस्त बातें जान लीं और ऐसा कौतुक दिखलाया कि जब वह पण्डा ठाकुरके मण्डपमें आया तब उसको विचित्र कौतुक दिखलाई दिया कि ठाकुरका समस्त मंदिर कवीर साहब-की मूर्तियोंसे भरा हुवा है ! जिस ओरको वह ब्राह्मण देखता है उधर वह कवीर साहबकी मूर्तिको उपस्थित पाता है और ठाकुरकी मूर्ति कहीं दिखलाई नहीं देती, तब वह ब्राह्मण अक्षत और पुष्प लिये चकित होकर खड़ा रह गया कि मैं किसकी पूजा करूं। ठाकुर तो कहीं दिखलाई नहीं देते। समस्त मंदिर कवीर साहिव-की मूर्ति से भरा हुआ है। तब वह अपने मनमें सोचने लगा

कि इसका क्या कारण है और फिरसे भोजनके समयमें भी कबीर साहबने सर्वत्र दर्शन दिया जसा इस ग्रन्थ लक्ष्मणबोधमें वर्णन हैं। अन्तमें उसने अपने दोषको जान लिया कि मैंने जो कबीर साहब को म्लेच्छ समझा था इसकारण ही मुझको यह दंड मिला है, और मुझको यह कौतुक दिखलाया। यह शोच समझकर वह ब्राह्मण कबीर साहबकी स्तुति और दोषके निमित्त क्षमा प्रार्थना करने लगा। जब इस पण्डाने सत्यगुरुकी बहुत प्रार्थना और स्तुति की और अत्यंत नम्रतापूर्वक अपने दोषोंके निमित्त क्षमा प्रार्थना की तब आप दयालु हुए और अपनी सब मूर्तियोंको समेट लिया केवल एक मूर्ति रह गई और ठाकुर की मूर्ति दिखाई देने लगी। तब कबीर साहबनें उस ब्राह्मणसे कहा कि हे पण्डा! अब तू ठाकुरको पूजो पर इस बातका ध्यान रखना कि आजके दिनसे इस जगन्नाथपुरीमें छूत न रहेगी और जाति पाँति का ध्यान तनिक भी नहीं रहेगा। प्रत्येक जाति एक दूसरे जातिके साथ निधड़क भोजन करेगी। अबलों पुरुषोत्तम पुरीमें वही नियम प्रचलित है।सब जातिके लोग एकही स्थानपर भोजन करते हैं कोई किसीके जूठेका कुछभी ध्यान नहीं करता।

इस ग्रन्थ की भी कई प्रतियां मेरे पास उपस्थित हैं कोई प्रति भी किसीके साथ मिलती नहीं है। सब प्रतियों में प्रसंगका तो ऐसा उलट पुलट है कि, कहीं किसीका पता नहीं मिलता और कविताकी तो यह दशा है कि, चौपाई के किसी चरण-में २२ मात्रा हैं और किसीमें १४ । और लिखायी की जो बात है उसको कहने की आवश्यकताही नहीं है इसकारण से यह

पुस्तक सबसे पुरानी प्रति जो १८६० सम्बत की लिखी हुई है उसीके अनुसार रक्खा है। हाँ नवीन प्रतियोंमेंसे भी प्रसंगानुसार जो उपयुक्त जान पडा है वह भी इस में रक्खा है किन्तु सो बहुत कम।

इति लक्ष्मणबोधः सम्पूर्णः।

इति

श्रीबोधसागरान्तर्गत

ग्रन्थ लक्ष्मणबोध

समाप्त ।